आज़ादी का अमृत महोत्सव

हंस

वार्षिक पत्रिका
2022

हंसराज कॉलेज
– दिल्ली विश्वविद्यालय –

प्रकाशन समिति

डॉ. विजय कुमार मिश्र (संयोजक)
सुश्री रूचि शर्मा
डॉ. उपलब्धि सांगवान

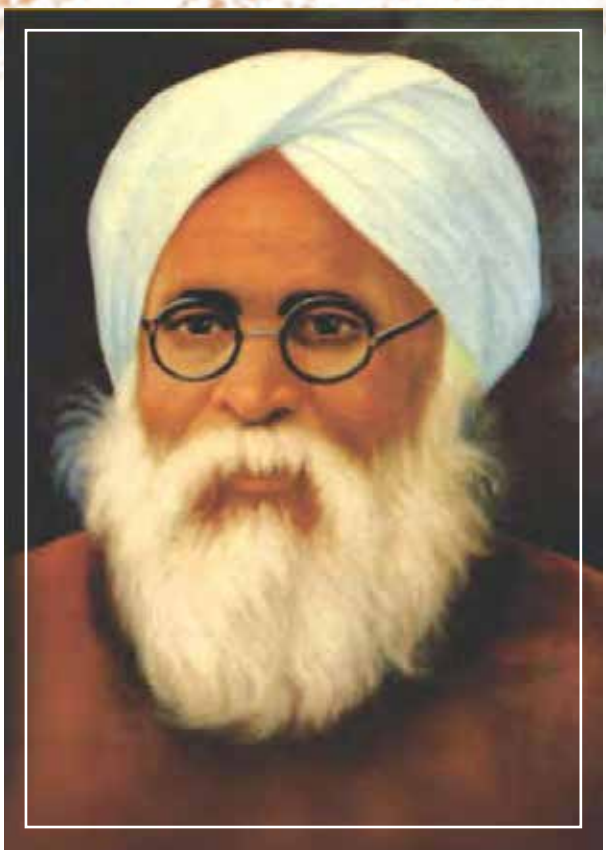

Mahatma Hansraj

(1864–1938)

The College was founded to preserve the memory of Mahatma Hansraj, acknowledged as the founding father of the D.A.V. movement in undivided India. Frail in body but heroic in sprit, Mahatmaji was selflessly dedicated to the course of education. He started his career as the Honorary Founder Headmaster of D.A.V. School, Lahore, in 1886 and over the next 50 years went on to shape the destiny of the D.A.V. movement in India.

प्रो. (डॉ.) रमा
प्राचार्या, हंसराज कॉलेज

हंसराज कॉलेज की वार्षिक पत्रिका 'हंस' एक बहुभाषी पत्रिका है। हिंदी, अंग्रेज़ी और संस्कृत भाषाओं की रचनाएँ इसमें प्रकाशित की जाती हैं। साहित्य की विविध विधाओं कविता, कहानी, निबंध समीक्षा, साक्षात्कार आदि के माध्यम से हंसराज कॉलेज परिवार के सदस्यों की रचनात्मकता को प्रकाशित कर उनकी साहित्यिक प्रतिभा को सामने लाने की दृष्टि से यह बेहद महत्त्वपूर्ण है। हंसराज कॉलेज की अब तक की यात्रा में 'हंस' निरतंर प्रगति के पथ पर अग्रसर है। यह कॉलेज के युवा विद्यार्थियों के साथ ही रचनात्मक लेखन में रूचि रखने वाले प्राध्यापकों एवं कर्मचारियों के लिए भी एक बड़ा मंच है। इसमें छात्र और प्राध्यापक दोनों की रचनात्मकता एक साथ उद्घाटित होती है। इसके माध्यम से लेखन के क्षेत्र में नए लोगों को एक बेहतरीन मंच तो मिलता ही है साथ ही निरंतर लेखन की प्रेरणा और प्रोत्साहन भी मिलता है। विद्यार्थी जीवन में कॉलेज की पत्रिका में अपनी रचनाओं के प्रकाशन से जो विशेष आनंद प्राप्त होता है उसकी अनुभूति प्रायः हम सबको है। हंसराज कॉलेज की पत्रिका में प्रकाशित होने वाले विद्यार्थियों में से कई लोग आगे चलकर साहित्य, सिनेमा, मीडिया, कला आदि क्षेत्रों में अपना विशिष्ट मुकाम हासिल करते रहे हैं। ये सभी आज अलग-अलग क्षेत्रों में जिस तरह सफलता की चोटी पर खड़े हैं उसमें हंसराज कॉलेज और 'हंस' पत्रिका में उनकी रचनात्मकता के प्रकाशन का विशेष योगदान है। इस वर्ष अपने परम्परागत स्वरुप और नए भावबोध एवं विशिष्ट रचनाओं के संग 'हंस' आपके सामने है। इस अंक की अनेक महत्त्वपूर्ण रचनाएं शामिल की गई हैं। इसके साथ ही अनेक पेंटिंग एवं रेखाचित्रों का भी सुंदर संयोजन किया गया है। इस अंक में प्रकाशित होने वाले विद्यार्थियों, प्राध्यापकों एवं कर्मचारियों को मेरी हार्दिक शुभकामनाएँ। मुझे उम्मीद है कि आगामी वर्षों में ये सभी अपने लेखन से समाज और राष्ट्र को नई दिशा देने में समर्थ होंगे। इस वर्ष के 'हंस' के संपादक मंडल को भी मैं हृदय से बधाई देती हूँ और सभी रचनाकारों के उज्ज्वल भविष्य की कामना करती हूँ।

डॉ. विजय कुमार मिश्र

संयोजक, प्रकाशन समिति

हंसराज कॉलेज की लंबी और गौरवशाली यात्रा के क्रम में हमारी वार्षिक पत्रिका 'हंस' का विशिष्ट स्थान है। इसके माध्यम से देश-दुनिया के सम्बन्ध में हमारे विद्यार्थियों, शिक्षकों एवं कर्मचारियों के अनुभव, दृष्टिकोण और संवेदनाएँ विविध साहित्यिक विधाओं के माध्यम से प्रकाशित होती रही हैं। उनकी भावनाओं, विचारों, रचनात्मकता आदि के प्रकटीकरण का एक बेहद शानदार मंच है 'हंस'। इसके माध्यम से समय-समय पर विद्यार्थियों के द्वारा बनाए गए चित्र आदि के माध्यम से भी उनके भाव को विस्तार मिला है। कक्षाओं की औपचारिक शिक्षा प्रणाली और नियमित पाठ्यक्रम के मध्य इस प्रकार की रचनात्मक गतिविधियाँ विद्यार्थियों के समग्र विकास की दृष्टि से बेहद महत्त्वपूर्ण सिद्ध होते हैं। संपादक मंडल ने विद्यार्थियों की रचनात्मकता को कविता, कहानी, लेख, समीक्षा, चित्र, फ़ोटोग्राफ आदि के माध्यम से 'हंस' के इस अंक में आपके समक्ष प्रस्तुत किया है। इसमें प्रकशित हिंदी, अंग्रेजी एवं संस्कृत तीनों भाषाओं की रचनाएं हंसराज कॉलेज के विद्यार्थियों की भाषाई और रचनात्मक विविधता का द्योतक है। रचनाएं आमंत्रित करने से लेकर, उनके चयन, प्रूफ और संपादन आदि की दृष्टि से संपादक मंडल के सदस्यों ने जो श्रमसाध्य कार्य किया है, वह अभिनंदनीय है। 'हंस' का प्रकाशन हमारे संपादक मंडल के सदस्यों के साथ ही प्रशासनिक कर्मचारियों के सहयोग के बिना संभव नहीं था। ऐसे सभी लोगों का हृदय की गहराईयों से आभार। कॉलेज की प्राचार्या प्रो. रमा ने हमेशा की तरह इस बार भी समुचित मार्गदर्शन और प्रोत्साहन से इस अंक को अंतिम रूप देने में बड़ी भूमिका निभाई है। इसके लिए प्राचार्या महोदया का विशेष धन्यवाद। आशा है 'हंस' का यह अंक आप लोगों को पसंद आएगा और आपकी रचनात्मक संतुष्टि की दृष्टि से भी यह बेहद उपयोगी सिद्ध होगा।

कृतिका
बी.ए . हिंदी (विशेष) , प्रथम वर्ष

हिंदी खंड

संपादक मंडल

डॉ. राजमोहिनी सागर
डॉ. प्रभांशु ओझा

छात्र- संपादक

आयुष द्विवेदी
नितेश कुमार पाण्डेय

विषयानुक्रमणिका

1. कह दो - डॉ. फ़रहत जहां 'फ़रहत' ---- 07
2. मुमकिन ही नहीं - डॉ. फ़रहत जहां 'फ़रहत' ---- 07
3. तुझे देखता हूँ तो जीता हूँ - ब्रजमोहन ---- 07
4. आजकल - ब्रजमोहन ---- 07
5. लेखन की शुरूआत - डॉ. नृत्य गोपाल ---- 08
6. बीरा – नरेन्द्र रावत ---- 09
7. अमावस की एक रात और दो घूँट सन्नाटा - आशुतोष चौबे ---- 09
8. कविता - कुलदीप सिंह ---- 10
9. दर्पण - बलजीत सिंह ---- 10
10. मातृभाषा: हमारी अपनी पहचान - नितेश कुमार पाण्डेय ---- 11
11. माटी पर ही लिया जनम है - आयुष द्विवेदी ---- 12
12. वो अजनबी लड़की - आकांक्षा ---- 12
13. भूख - पुष्पेन्द्र सिंह ---- 13
14. सब जीत लो - पुष्पेद्र सिंह ---- 13
15. मंजिल - आनंद यादव ---- 14
16. स्वतंत्रता संग्राम - अनुराग यादव ---- 17
17. किताबें कुछ कहना चाहती हैं - निखिल श्रीवास्तव ---- 17
18. डियर दोस्त - शिवानी राजपूत ---- 18
19. एक लड़की - अखिल ---- 18
20. साम्य की स्थिति और बिखराव - अमन प्रताप सिंह ---- 19
21. विविध - ज्योति पाल ---- 20
22. भटकाव - अनुराग यादव ---- 20
23. इच्छा - सूर्या ---- 20
24. भाषा, साहित्य, संस्कृति और राष्ट्र निर्माण - नितेश कुमार पाण्डेय ---- 21
25. नव आह्वान - विकास चौधरी ---- 23
26. सीख लो... - राहुल मौर्य ---- 23
27. आत्महत्या - निवारण या बेवकूफी - आयुष द्विवेदी ---- 24
28. पाज़ेब' एक मार्मिक कथा - यशस्वी वशिष्ठ ---- 25
29. अदना सा पाश्चात्य - आशुतोष चौबे ---- 26
30. एक दिन मैं चला जाऊंगा - आदित्य सिंह ---- 28
31. गजलें - राहुल मौर्य ---- 28

कह दो

डॉ. फ़रहत जहां 'फ़रहत'
सहायक प्रोफ़ेसर, प्राणीविज्ञान विभाग

अपनी आँखों से अपने दिल की कहानी कह दो।
बात जो दिल में है नज़रों की ज़ुबानी कह दो ॥

मदहोश हो जाएंगे भँवरे भी, जुगनू भी सभी।
अपने नाज़ुक लबों से बात सुहानी कह दो॥

एक मुद्दत से तड़पती रही सुनने को जिसे।
अपने दिल की तुम वही बात पुरानी कह दो॥

सोचकर मुझको जो तन्हाई में बहे थे कभी।
अपनी आँखों का वो बहता हुआ पानी कह दो॥

वफ़ा की फूल जो दिल में हैं खिलाए आपने।
"फ़रहत" को बस फूलों की जवानी कह दो॥

मुमकिन ही नहीं

डॉ. फ़रहत जहां 'फ़रहत'
सहायक प्रोफ़ेसर, प्राणीविज्ञान विभाग

चमकतीं दुनिया में खो जाए ये मुमकिन ही नहीं,
तू किसी और का हो जाए ये मुमकिन ही नहीं।

बस तेरे पास ही इस दिल को सुकू मिलता है,
दिल कहीं और बहल जाए ये मुमकिन ही नहीं

मेरी इन आँखों में तेरा ही अक्स बसता है
तेरी तस्वीर बदल जाए ये मुमकिन ही नहीं,

सर मेरा झुकता है ए रब तेरे ही सजदे में
सर कहीं और ये झुक जाए ये मुमकिन ही नहीं।

तुझे देखता हूँ तो जीता हूँ

ब्रजमोहन
सहायक प्रोफ़ेसर (तदर्थ), गणित विभाग

तुझे देखता हूँ तो जीता हूँ
तेरे बाद न जाने क्या होगा,
जिंदगी है ज़हर पर पीता हूँ
असर ना जाने क्या होगा।।

चंचल मन की मेरी आशाएं
रह रह कर मुझे सताएंगी,
फिर यौवन की इस काया का
परिवार ना जाने क्या होगा।।

मधुमय तन की ये परछाई
बनके बादल सी छायेगी,
फिर छाया की इस माया का
श्रृंगार ना जाने क्या होगा।।

कुछ दूर सही पर संग चलो
मन की राह चुनने के लिए,
आगें पथ के इन क़दमों का
व्यवहार ना जाने क्या होगा।।

आजकल

ब्रजमोहन
सहायक प्रोफ़ेसर (तदर्थ), गणित विभाग

महफ़िलों में नहीं जा पता हूँ मैं आजकल,
रुसवाइयों में अपनी ही खो जाता हूँ में आजकल।।

वो नाम जो तुने कभी दिया था बड़े प्यार से,
कोई और ले तो दिल बड़ा रुलाता है आजकल।।

तेरी यादें मेरे जिस्म की परछाइयाँ है बन गयी,
तेरा नाम ले दोस्त मुझे सताते है आजकल।।

मर कर ही खत्म होगा अब ये सारा सिलसिला,
पर दीवानों को मौत कहा आती है आजकल |

लेखन की शुरुआत

डॉ. नृत्य गोपाल
हिंदी विभाग, हंसराज कालेज

लिखने का मन करता है और समस्या यह है कि लिखना आरंभ कैसे करें? समस्या तो है! समाधान भी होगा ही। विद्यार्थी काल में यह समस्या अधिक सालती है। भीतर कुछ नहीं, बहुत कुछ है, और बाहर आने का मार्ग नहीं मिलता है। जो सजग हैं, विद्यालय काल से ही लेखन में प्रवृत्त होने लगे थे। उन्हें यह समस्या अधिक कष्ट नहीं पहुंचाती। पर, दूर दराज के क्षेत्रों से आए हुए विद्यार्थियों के सामने यह समस्या अधिक रहती है। इसका एक कारण यह भी है कि जहां पढने का अवसर ही बमुश्किल से मिलता हो वहाँ लेखन की बात कौन सोचे? विद्यालय प्रकाशन करने कराने की सोच ही नहीं पाते। पर, यह बात पुरानी है। जब दिल्ली में पढने का अवसर मिले। छपने के लिए मंच सहज उपलब्ध हों। महाविद्यालय बार बार प्रेरित करे। अनेक बार आमंत्रण मिले। सोशल मीडिया मुक्त और मुफ्त स्थान उपलब्ध कराए। आप फिर भी न लिखें तो लगता है आपके भीतर अभिव्यक्ति का एक कौना रिक्त है ?

हिंदी के कवि गजानन माधव मुक्तिबोध ने एक कविता लिखी है "मुझे कदम कदम पर'। इसमें वे लिखते हैं-"मुझे कदम कदम पर/ चैराहे मिलते हैं/ बांहें फैलाए!/एक पैर रखता हूं/ कि सौ राहें फूटतीं,/मैं उन सब पर से गुजरना चाहता हूँ,/ बहुत अच्छे लगते हैं/ अजीब सी अकुलाहट दिल में उभरती है,/ मैं कुछ गहरे में उतरना चाहता हूँ,/जाने क्या मिल जाए!" अब आपको यह तय करना होगा कि अकुलाहट के गहरे में कैसे उतरा जाए? इस बेचैनी में बहुत कुछ है। इसे खोजना होगा। सहेजना होगा। इसकी सबसे सरल और स्थाई विधि है लेखन। कलम उठाएं और लिखने लगें।

मुक्तिबोध कहते हैं कि-"मैं सोच रहा कि /जीवन में आज के /लेखक की कठिनाई यह नहीं कि/ कमी है विषयों की /वरन यह कि आधिक्य उनका ही / उसको सताता है / और, वह ठीक चुनाव कर नहीं पाता है।" इस ठीक चुनाव का मार्ग हमारे लोक से निकलता है। तनिक सोचिए और लिखिए अपने विद्यालय के संबंध में। वहाँ पढे हुए को। वहाँ की व्यवस्था को। वहाँ के मित्रों के बारे में। अपने अध्यापकों के बारे में। कौन जाने आपके विद्यालय का यह अनुभव शिक्षा व्यवस्था की वास्तविक तसवीर प्रस्तुत कर जाए ? कवि नरोत्तम दास ने आचार्य सांदीपनि के विद्यालय में पढने वाले दो मित्रों की मित्रता का 'सुदामा चरित्र' के रूप में वर्णन किया और वह मित्रता का श्रेष्ठ उदाहरण बन आज तक हमारे सामने है। आपका मित्र वर्णन आज के मित्रों की मित्रता को परिभाषित करे तो आपको हानि क्या है? उसके बारे में लिखकर बताइए तो सही।

अध्यापन आजीविका हो सकती है पर अध्यापक तो चरित्र है। आपके भले बुरे के निर्माण में एक भूमिका उसकी भी है। आपको यदि कुछ लगे तो उसके बारे में बताइए। आपके आकलन और सुझाव से भविष्य और वर्तमान का अध्यापक सीख सकता है। पर इसके लिए आपको कुछ बताना होगा।

महाविद्यालय की पत्रिकाएं लोक संस्कृति के संरक्षण का महत्वपूर्ण साधन हो सकती हैं और हैं। विभिन्न क्षेत्रों, वर्गों, समाजों की लोक संस्कृति का यथावत रूप वर्णन जैसा हमारे विद्यार्थी कर सकते हैं वैसा सेमिनार, वेबीनार, चर्चा, परिचर्चाओं में संभव नहीं है। इनमें लोक की कृत्रिम संस्कृति का वर्चस्व हो सकता है पर विद्यार्थी, जो अभी तक अकृत्रिम है, उसके द्वारा वर्णित संस्कृति भी कृत्रिमता से दूर सहज और सरल रूप में हमारे सामने आ जाती है। लोक जीवन की अभिव्यक्ति से लोक की भाषा का भी संरक्षण होता है। लोक का श्रेय और हेय भाव चिंतन के केंद्र में आता है। लोक भाषा के शब्द भाषा चिंतक के लिए कच्चे माल (रॉ मटेरियल) का काम करते हैं। 'राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020' जिन लोक भाषाओं के संरक्षण संवर्द्धन पर जोर देती है उसका मूल रूप इस संस्कृति चिंतन में से ही प्राप्त किया जा सकता है। विद्यार्थी इसके सशक्त अग्रदूत बन सकते हैं।

स्थानीय कृषि, खनिज उत्पाद, प्राकृतिक सुषमा, नदी, तालाब, भोजन, कपडा, रुचि, रचनाकार, वैज्ञानिक, शिक्षाविद्, स्वतंत्रता सेनानी, स्वतंत्रता संग्राम की गाथाएं सभी कुछ आपकी लेखनी का विषय बन सकता है। फिर इस लेखन की सहजता आपकी और समाज की कितनी बडी थाती होगी इसका आभास हमें नहीं है। आपकी बात को प्रकाशित करने वाली पत्रिका भी इससे समृद्ध बनती है।

आज हम जिन्हें बडे रचनाकार कहते हैं उनमें से अधिकांश यही कहते हुए पाए जाते हैं कि उनकी पहली रचना विद्यालय के दिनों की देन है। तब हमने यों ही कुछ भी लिख दिया था। पर उनकी यह अनगढ रचना ही होती है जिससे उनमें आत्म विश्वास आया था। अध्यापकों और मित्रों की प्रशंसा ने एक लेखकीय जागृति पैदा कर दी थी। कुछ होने का भाव भर दिया था। वह आत्म विश्वास आज जीवन दर्शन बन गया है। समूह चिंतन (ग्रुप डिस्कशन) के दौर में कई बार ऐसा लगता है कि जिस बात ने इसे विजेता बनाया है यह बात तो मैं भी कह सकता था। यह तो बहुत सामान्य सी बात थी। इसमें विशेष क्या था ? मैंने तो बस यों ही इस बात को नहीं कहा था। पर सोचिए आपने उस बात को क्यों नहीं कहा? यह जो नहीं है इसी ने आपको विजेता होने से रोका था। इसलिए हाँ का साथ लीजिए और लिखिए। विषय बहुत हैं। आपमें क्षमता बहुत है। आपके लिखे हुए से हमें बहुत कुछ सीखना है। शुभकामनाएं।

बीरा

नरेन्द्र रावत
पुस्तकालयाध्यक्ष, हंसराज महाविद्यालय

एक प्रकाश–पुंज से दीप्त हुए
इस तम की गहराई में तुम
प्रशांत, अद्वितीय, नीरव बिपिन में
सृष्टि की सुन्दरतम प्रतिकृति हो तुम।।

पाषाणों से टकराती
अलकनंदा की लहरों सी कल-कल
देवभूमि का मान बढ़ाते
हिम श्रृंगो से विराट हो तुम।।

पावन धरा चहुँ ओर जहां भी
कौरवों के अट्टहास सी गूंजे
द्रौपदी के पावन चीर की खातिर
कृष्ण रूप में आये थे तुम।।

काल के कलुषित खंजर से
भले ही लहू लुहान हुए हो
कांति तेरे गौरव गाथा की
अजर रहेगी, अमर रहेगी।।

हे भारत भूमि के श्रेष्ट नायक
अश्रु बहते है मेरे छल-छल
फिर लौटोगे इस धरा पर
निहारें पलकें सबकी पल-पल।।

वीर ! वीर कभी मृत्यु के हाथों
ना कभी मिटा है ना कभी मिटेगा
तेरे स्वप्नों का इन्द्रधनुष हमेशा
चमकेगा यूँ ही पार क्षितिज के .....

(देश के पहले रक्षा प्रमुख जनरल बिपिन रावत के असामयिक निधन पर श्रद्धांजलि)

अमावस की एक रात और दो घूँट सन्नाटा

आशुतोष चौबे
परास्नातक हिंदी, पूर्वार्ध

दूर से आती एक आवाज
अंदर दाख़िल होती है,
बिना दरवाजा खटखटाये -धीरे से
अदृश्य आवाज को देखकर
(दृश्य अदृश्य की वास्तविक प्रतीति नहीं है)

मैंने अभिवादन करना चाहा,
बैठाना चाहा कुर्सी पर
फिर एकाएक दूरी बना ली
दोनों स्थितियों से,
कुछ देर बाद अदृश्य समाप्त हो गया
दृश्य होकर - धीरे से
उस हवा की गति 365 किमी/घण्टा
और
हृदय की 62 हर्ट रेट मोनिटर
मापी गयी
बालकनी से चाँद जा चुका था
(जो पिछले शुक्ल पक्ष से जाने की कोशिश कर रहा था)-
धीरे धीरे (अगले शुक्ल पक्ष तक)

अचानक नहीं गया
तुम्हारी तरह
मैंने देखा शंख बज रहे हैं
(देखना खौफनाक क्रिया होने के बावजूद भी)

बजाने वाले अदृश्य हैं
दूर तक एक आवाज दिखाई दे रही थी
अमावस की रात में-छत के नीचे
सन्नाटा बस दो घूँट रह गया...
"मैंने चुपचाप
दो घूँट सन्नाटे को पीकर
अपना गला सुखाया
फिर सो गया"

कविता

कुलदीप सिंह
बी.ए. हिंदी (विशेष), तृतीय वर्ष

कविता सोचने से कविता नहीं लिखी जाती
कविता फूटती है विसंगतियों से
जो दीख पड़ती है,
सड़कों पर।
मेरे घर के सामने के उस ओर या
फिर मेरे घर में,
या मेरे घर से दूर जहाँ
मुश्किल है सांस लेना,
कभी मिल जाती है मेरी ही शर्ट में
ऊपर वाले पॉकेट में,
नजर नहीं आयी थी ये मुझे अभी तक
शायद हृदय तक पहुंचा न हो हाथ मेरा,
कभी मिल जाती है फ़टे कपड़ों में
कपड़े बुनने की जगह मैं बुन लेता हूँ एक कविता,
मैं तलाशता हूँ कविता
कचरा बीनने वाले कि तरह,
लेकिन अनायास ही मैं
उसी में पा जाता हूँ एक कविता,
फिर उलजुलूल विचारों को
करीने से जोड़ने की कोशिश करता हूँ,
लेकिन वह घुमावदार बन जाती है जैसे विनाश काल में मेरी बुद्धि
बन जाया करती है।
लेकिन ऐसे समय में जब बुद्धि उलट परिणाम देती है
कविता पहुंचा देती है किसी मोड़ पर।

कविता के विकास के समय
कविता स्थान ढूंढती है पनपने का,
कुछ उगती कविता को मैं दे देता हूँ खाद
अपने गमले से
गमले की मिट्टी उसके लिए नहीं है बाहरी,
कविता उगाने के लिए चाहिए एक अदद आदमी
साथ ही हर आदमी को चाहिए अदद कविता,
जो आदमी को कर दे पूरा
या वह खुद बन जाये आदमी,
और अपना ले एक जीवंत चेहरा
या चलायमान आदमी की तरह न हो स्थिर,
जैसे मुक्त हुआ पक्षी पाटना चाहता है लंबी दूरी
कविता भी चाहती है कुछ ऐसा ही,
जब निर्मित हो जाती है तो
व्योम में करती है विचरण,
कभी इस हाथ तो कभी उस हाथ
को करती है समृद्ध,
और सफर नहीं थमता, चलायमान है
पृथ्वी की तरह या मानो
पृथ्वी चालयमान है कविता की तरह.....

दर्पण

बलजीत सिंह
बी.ए. हिंदी (विशेष), प्रथम वर्ष

कोई चीज़ नहीं है क्रोध–मुक्त,
हर कण में गुस्सा होता है।

सत्य में गुस्सा होता है!
जब झूठ का होता बोलबाला,
असत्य में सत्य का बिम्ब दिखे,
तब सत्य में आग वह लगती है,
अश्रुओं से क्रोध छलकता है।

झूठ में गुस्सा होता है!
जब असत्य बात कोई कहता है,
विश्वास न उसपर होता है,
विश्वास दिलाने को वह व्यक्ति,
फिर गुस्से में चिल्लाता है।

दोनों का गुस्सा स्वाभाविक,
मगर फर्क दोनों में दिखता है।

असत्य का क्रोध जब बढ़ता है,
तो और झूठ बुलावता है।

साबित करने की प्रेरणा परंतु,
सत्य का क्रोध दे जाता है।

मातृभाषा: हमारी अपनी पहचान

नितेश कुमार पाण्डेय
बी.ए. हिंदी (विशेष), तृतीय वर्ष

'निज भाषा उन्नति अहै, सब उन्नति को मूल,
बिन निज भाषा ज्ञान के, मिटत न हिय के सूल'। (भारतेंदु हरिश्चंद्र)

अर्थात्, मातृभाषा की उन्नति के बिना किसी भी समाज की तरक्की संभव नहीं है तथा अपनी भाषा के ज्ञान के बिना मन की पीड़ा को दूर करना भी मुश्किल है। यह कई शोधकर्ताओं द्वारा पहले ही साबित किया जा चुका है कि मातृभाषा की भाषाई क्षमता का संज्ञानात्मक क्षमताओं और सीखने की क्षमताओं के विकास से गहरा संबंध है। मातृभाषा को प्राप्त करने में निहित भाषाई अर्थ भी एक विदेशी भाषा सीखने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाता है। हाल ही में रचनात्मकता में मातृभाषा के महत्व को मान्यता दी गई है। मातृभाषा के सभी प्रमुख पहलुओं में से, माता-पिता और विदेश में रहने वाले छात्रों के लिए सबसे महत्त्वपूर्ण हिस्सा भावनात्मक पहलू है। मातृभाषा आपकी पहचान स्थापित करने में एक आवश्यक भूमिका निभाती है। इतिहास और संस्कृति भाषा में अंतर्निहित है। मातृभाषा सीखना अपने माता-पिता, रिश्तेदारों और यहाँ तक कि पीढ़ियों से पहले और बाद के इतिहास और संस्कृति को सीखने का प्रतीक है। स्व-जागरूकता जो आप अपने मूल देश से संबंधित हैं, आत्मविश्वास और स्थिरता देता है। सीएसयू फुलरटन के एक प्रोफेसर ग्रेस चो कहते हैं कि "विदेशों में रहने वाले कई दूसरी पीढ़ी के कोरियाई लोगों को मातृभाषा के महत्व का एहसास नहीं होता है जब तक कि वे स्नातक होने के बाद आंतरिक संघर्ष का अनुभव नहीं करते हैं और कार्यबल में प्रवेश करते हैं।"

यदि आप अपने मूल देश में रहते हैं, तो मातृभाषा सीखने में अधिक बाधाएँ नहीं हैं, लेकिन अगर आपके माता-पिता विदेश में रहते हैं या रहे हैं और आपको एक अंतरराष्ट्रीय विद्यालयों में पढ़ना है तो आपको क्या करना चाहिए? इन छात्रों के लिए मातृभाषा शिक्षा कैसे आनी चाहिए? साहित्यिक पाठ्यक्रम छात्रों को न केवल साहित्यिक कार्यों के बारे में जानने के लिए, बल्कि राष्ट्रीय एवं अंतरराष्ट्रीय दुनिया में हो रहे परिवर्तनों को समझने में मदद करने के लिए मूल देश के लोकप्रिय संगीत, फिल्मों, टीवी शो, पॉडकास्ट और वीडियो के बारे में भी जानने में सक्षम बनाता है। साथ ही "सांस्कृतिक दिवस" या "अंतर्राष्ट्रीय मातृ भाषा दिवस" जैसे कार्यक्रम छात्रों को अपनी मातृभाषा का उपयोग करने और अपनी मूल संस्कृतियों पर गर्व करने के लिए प्रोत्साहित करते हैं। हालाँकि स्कूल के कई अधिकारी और शिक्षक स्कूल में विभिन्न प्रयास कर रहे हैं, फिर भी ऐसे छात्र मौजूद हैं जिन्हें अपनी मातृभाषा प्राप्त करने में कठिनाई होती है। ज्यादातर मामलों में, ये ऐसे छात्र हैं जो प्राथमिक स्कूल के पहले कुछ वर्षों के दौरान अपनी मातृभाषा सीखने के लिए खिड़की से चूक गए हैं। घर पर मातृभाषा सिखाना महत्वपूर्ण है क्योंकि कई मातृभाषा कक्षाएं उच्च ग्रेड में पेश की जाने लगती हैं, और कक्षाएं लगने के समय की सीमाएं होती हैं।

छात्रों को पढ़ाते समय, ऐसे कई मामले होते हैं जहाँ छात्र अपने मूल देश में और अपनी मातृभाषा के कौशल के साथ समय नहीं बिता पाते हैं। इससे पता चलता है कि घर में मातृभाषा शिक्षा का महत्व आवश्यक है। यदि छात्र निम्न श्रेणी में है, तो माता-पिता को मातृभाषा में हर रोज़ बातचीत करनी चाहिए और अपनी मूल भाषा में गाने सुनना, किताबें पढ़ना या टीवी शो देखना चाहिए। लिखना आवश्यक है, लेकिन यह धीरे-धीरे किया जाना चाहिए। यदि छात्र तीसरी कक्षा से ऊपर है, तो माता-पिता को छात्र को फिल्में देखने और बातचीत करने, सॉकर खेलने या अपनी मूल भाषा में धार्मिक गतिविधियों में भाग लेने के लिए एक वातावरण प्रदान करना चाहिए। हर दिन की भाषा मौलिक है, लेकिन संवादी कौशल के साथ गहराई से भाषा सीखना कठिन है। जब किसी छात्र को संवादात्मक बोलने में समस्या नहीं होती है, तो माता-पिता अक्सर सोचते हैं कि छात्र मातृभाषा में अच्छा है। जिस तरह अपने मूल देश में रहने का मतलब यह नहीं है कि हर किसी को महान व्याकरण ज्ञान है। संवादी कौशल मातृभाषा के गहन ज्ञान का संकेत नहीं देते हैं। इन बाधाओं को दूर करने के लिए, माता-पिता को नाश्ते या रात के खाने के दौरान मूल देश के समाचार चैनल को देखने की सलाह दी जाती है ताकि वे अपने मूल देश की खबरों को देखने, नए शब्दों का सामना करने और विचार और बहस के लिए खुद को उजागर करने का अवसर दे सकें। जब वे अपने मूल देश के बारे में प्रश्न पूछते हैं, तो माता-पिता को छात्रों के उत्तर देने के लिए, अपने मूल देश के बारे में भी सूचित करना चाहिए। यदि संभव हो, तो अपने मूल देश का दौरा करने के लिए विद्यालयी अवकाश का उपयोग करने की भी सिफारिश की जाती है।

यदि छात्र ने पहले से ही किशोरावस्था में संपर्क किया है और मातृभाषा का अध्ययन करने से दृढ़ता से इनकार करता है, तो माता-पिता को इस तथ्य को स्वीकार करना चाहिए। यदि सीखने को मजबूर किया जाता है, तो यह एक प्रतिरोध पैदा कर सकता है और केवल अपने मूल देश के प्रति एक प्रतिकर्षण पैदा कर सकता है। यद्यपि मातृभाषा महत्त्वपूर्ण है तथापि जीवन के कई रूप हैं। मातृभाषा के महत्व पर जोर देने का कारण मैं इस उम्मीद में हूँ कि छात्र आत्म-सम्मान और आत्मविश्वास के साथ रह सकेगा। इसलिए, छात्र के लिए अपनी मूल भाषा में निपुण नहीं होना कोई त्रासदी नहीं है। यदि छात्र अपने दिए गए वातावरण में सबसे अच्छा विकल्प बनाने और अपने स्वयं के जीवन का नेतृत्व करने में सक्षम है, तो और क्या महत्वपूर्ण होगा?

माटी पर ही लिया जनम है

आयुष द्विवेदी
बी.ए. हिंदी (विशेष), तृतीय वर्ष

माटी पर ही लिया जनम है,
माटी पर ही है मिटना,
अरे सलोने तुम क्या जानो,
चिड़ियों के संग उड़ना।

सुबह सबेरे प्रबल क्रांति है,
तुम्हे हमेशा जगते रहना,
नदियों की झंकार डराती,
लहरों के संग है बहते रहना।

वीर पुत्र की मर्यादा लेकर,
रणभूमि में है तुमको लड़ना,
तय तो है ही विजय तुम्हारी,
बस अंत समय तक लड़ते रहना।

जीवन तो है कठिन डगर पर,
मगर परिश्रम करते रहना,
मशाल बनाकर मंजिल की तुम,
आशाओं को जलाते रहना।

सुनो समय की ललकार यही है,
अब बस है आगे बढ़ते रहना,
ध्वजा जीत का लहराएगा,
बस तुमको है लड़ते रहना।

वो अजनबी लड़की

आकांक्षा
बी. एस. सी. मानव विज्ञान (विशेष), तृतीय वर्ष

वो अजनबी लड़की, वो भीड़ में सबसे अलग
सब यहां वहां खोए, वो खुद में खोई लड़की
ठंडी हवाओं, शीतल छांव, बारिश की मिट्टी सी लड़की
वो सपनों को पूरा करने को सोचती
जिसकी आंखें बोलती है होंठों से ज्यादा
वो अकेली बैठी इंतजार करती लड़की
किसी कहानी सी आकर्षक, अंत सी रहस्यमयी
जिसकी ज़ुल्फे होंठो और आंखों से गुजरकर
हवा को रुख बता रहीं है
बगीचों के फ़ूलों की खुशबु, डूबते सूरज की लालिमा
में जिसकी आंखें झील सी चमकदार
वो शायरी सी बेबाक लड़की
है जिसको इल्म ज़माने की हर रुसवाई का
जिसकी सोच है तलवार जैसी धार से सजती
मगर आवाज है खूबसूरत साज सी जिसकी
वो तरन्नुम सी गुलजार लड़की
वो जो जहाँ भर का बोझ ढोए है
और मायूसी को कर चुकी हमराज़ जो कबकी
मगर वो मुस्कराती है छुपाकर मुफलिसी खुद की
वो ख़यालों सी आजाद लड़की
वो सपनों सी आबाद लड़की

कीरति भनिति भूति भलि सोई।
सुरसरि सम सब कहँ हित होई॥
~ तुलसीदास (श्रीरामचरितमानस:बालकांड)

भावार्थ:- कीर्ति, विद्या और सम्पत्ति की सार्थकता तभी है अर्थात वही उत्तम है,
जब वे गंगा की तरह सबका हित करने वाली हो।

भूख

पुष्पेन्द्र सिंह
बी.ए. हिंदी (विशेष), तृतीय वर्ष

भूख देखा
प्यास देखा
जिस गली से भी गुज़रा
उस गली में मैंने
जिंदा लाश देखा।।
बच्चे देखा
जवान देखा
बूढ़ों को भी ताकते आसमान देखा।
सुबह देखा
शाम देखा
रोटी के लिए
उनका अथाह काम देखा।।
गोरे देखा
श्याम देखा
काम करने वालों के
मैंने अनेकों नाम देखा।।
न घर देखा
न कोई मकान देखा
देखा तो बस
ताकते धरती और आसमां देखा।।
रीति देखा
नीति देखा
भूखों को मारने की
त्रप्तों की राजनीति देखा।।
त्रप्तों में,
धर्म देखा
जाति देखा
इनमें अनेकों
प्रजाति देखा
भूखों के
न धर्म देखा
न जाति देखा
न ही कोई प्रजाति देखा।।
देखा तो बस
भूख देखा
प्यास देखा
राहगीरों से
तो टूक की, आश देखा।।

सब जीत लो

पुष्पेद्र सिंह
बी.ए. हिंदी (विशेष), तृतीय वर्ष

समय निकलता जा रहा है
इसलिए खुद से
प्रश्न करो
तर्क करो
वितर्क करो
बहस न करो,
हल करो,
उत्तर प्रतिउत्तर करो
हार जीत का
भय छोड़ो,
जीत के लिए
आगे बढ़ो, लड़ो
और अंतिम यही
सब जीत लो
नाम भी, काम भी
जीवन भी मरण भी,
वक़्त है फिर भी
वक़्त बहुत कम है
जो निकलता जा रहा है
हाथ से भी और
हयात से भी!

खुसरो दरिया प्रेम का, उल्टी वा की धार।
जो उतरा सो डूब गया, जो डूबा सो पार।।
~ अमीर खुसरो

भावार्थ:- प्रेम एक ऐसा समुंदर है जिसकी उल्टी धार होती है। जो भी इस प्रेम-दरिया से अलग है वह इस भवसागर में डूब जाता है, और जो इस प्रेमदरिया में डूबता है वह इस संसार से पार हो जाता है।

मंजिल

आनंद यादव
बी.ए. हिंदी (विशेष), तृतीय वर्ष

सड़क के किनारे पीपल के वृक्ष की छाया में रात्रि के प्रथम पहर में अंकुश और कामिनी चाय की चुस्की लेते हुए बात कर रहे हैं.....कामिनी अपने दिनचर्या के विषय में बता रही है लेकिन अंकुश उदास मन लिए कामिनी की बात अनसुना कर रहा है.....

कामिनी (अंकुश की ओर देख कर)-" कहां खोए हो ?मेरी बातें तुम्हें अच्छी नहीं लग रही क्या?"

अंकुश (अचानक चेतना अवस्था में आते हुए)-" अरे नहीं नहीं ....बस कुछ सोच रहा था| "(फिर उदास हो जाता है)

कामिनी-" क्या हुआ?"

अंकुश (सोच कर)-"मंजिल जीवन में कितना महत्व रखती है?"

कामिनी –"बहुत....अगर मंजिल मिल जाए तो जीवन सफल हो जाता है|"

अंकुश(जिज्ञासा से)-" पर मंजिल किसे कहते हैं?"

कामिनी (सोच पर)-"जो व्यक्ति अपने जीवन में चाहता है जिसमें वह भविष्य में जीवन सुंदर और सफल मानता है.... शायद|

अंकुश (नीचे देखते हुए)"पर आवश्यक नहीं है कि प्रत्येक व्यक्ति अपनी रूचि के अनुसार मंजिल चुने क्योंकि कभी-कभी प्रतिकूल परिस्थितियां भी उसे मंजिल चुनने को बाध्य कर देती हैं..."

कामिनी (सोचते हुए)-" परिस्थितियां सिर्फ भाग्यवादियों को ही उनके मंजिल से डिगा सकती हैं किंतु कर्मवादी व्यक्ति प्रतिकूल परिस्थितियों से लड़ते हुए अपने मंजिल तक जाता ही है कर्म से भाग्य बनता है ना कि भाग्य से कर्म|"

अंकुश(खड़े होते हुए)-" तुम जैसी गर्लफ्रेंड कहां मिले.... हमेशा मेरे मानसिक तनाव को सकारात्मक ऊर्जा में परिवर्तित कर देती हो|'

कामिनी (हंसते हुए)-" मैं तुम्हारे प्रभाव में ऐसी हो गई मेरा तो विषय गणित है तुम्हारा हिंदी साहित्य है"

अंकुश –"पर साहित्यकार तो तुम्हारे अंदर झलकता है.... खैर चलो आज स्पेक्ट्रम समाप्त करना है "

(लंबी सांस छोड़ता है)

कामिनी (खड़ी होकर)-" हां चलो ...मैं तो अभी एम लक्ष्मीकांत कर रही हूं|"

दोनों अपने अपने कमरे की तरफ जाते हैं| अंकुश आज स्वयं को बहुत सकारात्मक महसूस करता है क्योंकि उसे आज लग रहा है कि उसे मंजिल का रहस्य पता चल गया है ...(सोचता है)" मंजिल प्रत्येक व्यक्ति के ह्रदय में कल्पना युक्त संसार है.... कर्म से वह मंजिल को अपना भाग्य बना सकता है|"

अंकुश कमरे पर पहुंचता है, शिवम उससे पूछता है –"और कैसा रहा दिन?"

अंकुश-" ठीक ही था.... कोचिंग का कोर्स समाप्त होने वाला है अगले महीने टेस्ट सीरीज ज्वाइन कर लूंगा क्योंकि 3 महीने ही बचे हैं' प्री' को(सांसे छोड़ता हुआ).....बहुत प्रेशर..|"

शिवम (हामी भरते हुए)-" हां लेकिन जब आईएएस बन जाओगे तो यह मेहनत क्षुद्र बन के रह जाएगी"

अंकुश (मुस्कुराकर) –"और तुम्हारे प्रैक्टिस सही चल रही है ना?"

शिवम –"हां .....चलो खाना खाते हैं....."

अंकुश और शिवम दोनों अपने- अपने ह्रदय मेंअपनी -अपनी मंजिल को लिए एक छोटे से गांव से एक महानगर दिल्ली आ गए हैं| दोनों बचपन से अच्छे मित्र रहे हैं, दोनों अपने -अपने मंजिल के लिए अपने -अपने क्षेत्र में परिश्रम कर रहे हैं | दोनों, अंकुश आईएएस तो शिवम क्रिकेटर बनने की आशा लिए इस सागर रुपी संसार में, गंतव्य स्थल तक पहुंचने के लिए, तत्पर नाव के समान, अपनी -अपनी दिशा में बह रहे हैं|

अंकुश के मोबाइल की रिंग बजती है, वह आप कॉल उठाता है-" प्रणाम पापा"

"और कैसे हो?"

"अच्छा हूं, बस अभी ही खाना खाया अभी अभी|"

"और पढ़ाई कैसी चल रही है?"

"अच्छी चल रही है....."

"मेहनत से..... बेटा ध्यान रखना तुम्हें पता ही है कि अंतिम चांस है फिर हम इतना खर्च न उठा पाएंगे....."

अंकुश (उदास होकर)-" जी पापा"

"लो मम्मी से बात करो"

मम्मी –"और तबीयत ठीक है ना .....खाना खा लिया?"

"सब ठीक है ...खाना भी खा लिया"

"होली पर आएगा?"

(उदास मन से) –"नहीं, बहुत पढ़ना है"

मम्मी(नीरस मन से)-"ठीक है, कोई ना ध्यान रख अपना"

"ठीक है मम्मी रखता हूं"

"ठीक"

"प्रणाम"

(फोन रख देता है)

अंकुश का मन उदास हो जाता है, वह चलते-चलते सोचता

है-“ मनुष्य का जीवन कितना संघर्षपूर्ण है ..कहीं अपने सपनों से संघर्ष है, कहीं समाज से, तो कहीं आर्थिक समस्याओं से संघर्ष है |समाज में वर्ग-भेद कितना है... कोई जन्म से राजा समान है कोई जन्म से भूख से परेशान.... क्या जन्म से पूर्व भी कोई कर्म करना होता है ... क्योंकि कर्म से भाग्य बनता है (अचानक रुक कर) मैं क्यों हमेशा नकारात्मक हो जाता हूं.... फोकस अंकुश फोकस....”

फिर अंकुश पढ़ने बैठ जाता है अगली सुबह उठता है फिर वही प्रतिदिन की दिनचर्या के अनुसार दोपहर तक पढ़ाई कर शाम को कोचिंग जाता है फिर कोचिंग के बाद चाय की दुकान पर सामने से मिलता है-“ और अब तो ‘प्री’ की डेट भी आ गई... (प्रसन्न होकर)”

कामिनी (उदास मन से)-“हाँ”

अंकुश (अचानक मुस्कुराना बंद कर)-“ क्या हुआ?”

कामिनी (अनमने मन से)-“ मेरा तो कोर्स भी ना कवर हुआ अभी..”

अंकुश(निश्चिंत होकर)-“बस इतनी -सी बात.. अब तो कोचिंग भी बंद हो जाएगी तो पूरा टाइम मिलेगा तो कवर कर लेना|”

कामिनी (लंबी सांसे छोड़ते हुए)-“हम्म”

अंकुश (शांत होकर)-“ एक बात बोलूं?”

कामिनी –“हां प्लीज”

अंकुश (उदास मन से)-“क्या हम सफल हो जाएंगे?”

कामिनी(मुस्कुराकर)-“ परिश्रम और कर्म करेंगे तो जरूर”

अंकुश कामिनी की नजरों में आशावान निगाहों से देखता है|

कामिनी (मुस्कुराकर)-“आज चलो ना, कहीं घूमने, मन भी फ्रेश हो जाएगा ....और बाकी फिर कोचिंग के बाद कब मिलेंगे.... कुछ पता नहीं....”

अंकुश (रूठकर) –“ मतलब क्या है रोज शाम को इस पीपल के नीचे चाय पीने आएंगे...(रुककर, आंखें नीचे करके) तुमसे बात कर मुझे आत्मविश्वास आता है .....आई लव यू ...!!”

कामिनी (मुस्कुराकर)-“आई लव यू टू”

दोनों घूमने जाते हैं फिर कुछ दिन में कोचिंग समाप्त हो जाती है| दोनों अपने-अपने पढ़ाई में लग जाते हैं, रोज शाम चाय पर मिलते हैं एक -दूसरे की पढ़ाई पर बात करते हैं, एक दूसरे की समस्या को सुलझाते हैं और साथ में अपने प्रेम को भी..... प्रेम अगर इंसान को प्रेरणा देने लगे तो वह इंसान की आवश्यकता बन जाता है और कभी यह आवश्यकता उन्नति में तो कभी अवनति में परिणत होती है.....

‘प्री ‘की परीक्षा के पूर्व वाली रात्रि को अंकुश और कामिनी बहुत बेचैन हो जाते हैं...दोनों को नींद नहीं आतीहै... ह्रदय की धड़कन बढ़ जाती है ... कभी करवटें बदलते तो कभी छत को घूरते ....अपने- अपने मस्तिष्क में परीक्षा भवन की तस्वीरें खींचते... मैं ऐसे करूंगा /करूंगी... अगर प्रश्न न आए तो दिमाग को शांत रखना है.... प्रश्न ध्यान से पढ़ना है ..और ना जाने क्या-क्या! जैसा कि प्रत्येक विद्यार्थी परीक्षा से पूर्व वाली रात को सोचता है फिर कब नींद लग जाती है पता ही नहीं चलता है|

अगली सुबह अंकुश उठता है फिर धड़कने तेज होती रहती हैं फिर कामिनी को कॉल करता है....

“गुड मॉर्निंग”

“गुड मॉर्निंग”

“और कैसा लग रहा है ?.... मैं तो समुद्र की लहरों के समान चंचलता महसूस कर रहा हूं ...कभी मन शांत हो जाता है मानों तूफान से पूर्व की शांति है.....”

(हंसकर)-“सेम टू यू..... पर कोई न, आज तो अपने कर्मों से अपनी मंजिल को अपना भाग्य बनाना है...”

(मुस्कुराकर) –“हां, यही तो एक खुशी है|”

“चलो मैं जा रही हूं नहाने..... ऑल द बेस्ट ...शाम को मिलते हैं”

“ओके ...ऑल द बेस्ट”

कामिनी से बात करने के बाद अंकुश आत्मविश्वास से ओतप्रोत हो जाता है... गाने गुनगुनाता हुआ नहाता है, खाता है और तैयार होता है.... मानो किसी मछली को पानी से निकालकर फिर पानी में छोड़ दिया गया हो..|

कामिनी शाम को चाय पीने वाले स्थान पर अंकुश की प्रतीक्षा कर रही होती है....” अभी तक आया नहीं.... कहीं पेपर तो बुरा नहीं न हुआ.... नहीं नहीं बहुत मेहनत की थी तो पेपर क्यों बुरा होगा... मोबाइल भी ऑफ थी शायद अब आन हो अब करूँ.....

“ हेलो, कहां हो मैं वेट कर रही हूं...(रुठे स्वभाव में)”

(किसी अजनबी की आवाज)-“ सॉरी मैम, इनका एक्सीडेंट हो गया था सुबह और उनके दाएं हाथ में फैक्चर हो गया लेकिन अभी चिंता की कोई बात नहीं है”

इतना सुनते ही कामनी के पैरों तले से जमीन सरक गई |वह छुईमुई पशु के समान सिकुड़ गई ....आंखों से आंसू, झरने के पानी के समान, गिरने लगे और वह वहीं जमीन पर आशा अवस्था में बैठ गई.....

(रुआंसी आवाज में)-“ किस हॉस्पिटल में?”

“इंदिरा हॉस्पिटल, कमरा नंबर -322”

कामिनी अपने को संभालते हुए... मानो आंसुओं से कह रही कि तू मेरे अधिकार क्षेत्र में आता है तू मुझे कमजोर नहीं बना सकता..... वह हॉस्पिटल पहुंचती है, अंकुश को देखकर रोने लगती है.....

“ यह क्या हो गया.....”

“ अंकुश कुछ नहीं बोलता ....बस उसकी आंखों से आंसू निकल रहे हैं मानो कह रहे हैं –“सब समाप्त हो गया” और उसका हृदय चीख रहा हो-“ कर्म का स्थान भाग्य से निम्न है और कर्म से भाग्य नहीं बदलता है.....”

धीरे-धीरे दिन बीतते हैं| ‘प्री’ का परिणाम आता है.. कामिनी क्लियर कर चुकी होती है... पर खुश नहीं रहती है|

अंकुश जो लगभग ठीक ही हो चुका है पर अब वह लिखने में

बस नाम-मात्र ही सक्षम है..... अब वह सदैव दुखी ही रहता है.....

एक दिन शाम को वह कामिनी से कहता है-" तुम मेरी चिंता ना करो अपने मेन्स से पर ध्यान दो ....मेरा तो भाग्य ही यही था .....हां एक बात जरूर कहूंगा कि कर्म और भाग्य एक तराजू के दो पलड़े हैं और भाग्य का पलड़ा सदैव भारी रहता है चाहे तनिक भर ही क्यों न हो....!!!"

कामिनी (सोचकर)-" हूं"

कामिनी को लगा कि अंकुश उससे यह कहना चाहता है कि "तुम गलत थी ....अगर कर्म से भाग्य बनता और मंजिल मिलती ...तो मैं भी आज तुम्हारे साथ मेन्स देने की तैयारी कर रहा होता..... लेकिन.."

अंकुश (अपने आंसुओं को रोक कर)-" मैं गांव जा रहा हूं और अब दिल्ली ना आऊंगा ....वहीं कुछ करके जीवन चला लूंगा"

कामिनी (स्तब्ध होकर)-" कॉल तो करोगे न?"

अंकुश (कठोर होकर)-" हां ....लेकिन अब मैं तुम्हें अपना नहीं कह सकता.... क्योंकि.....(रुक जाता है)"

"क्या क्योंकि पर मैं तो मानती हूं ना...(रोते हुए)"

अंकुश (मुँह दूसरी तरफ करके)-" कुछ नहीं.... बस तुम अपने जीवन पर ध्यान दो ....अगर भाग्य में रहा तो फिर मिलेंगे"

कामिनी रोते हुए चली जाती है और सोचती है-" जीवन कितना जटिल है..... कब किसे सुख मिल जाए और कब उस पर दुखों का पहाड़ टूट जाए.... कुछ ना पता.."

अगली सुबह कामिनी जब नॉर्मल होती है तो अंकुश को कॉल करती है पर कॉल न लगता है और उसके रूम पर जाने पर उसे पता लगता है कि अंकुश सदैव के लिए गांव चला गया ....वह टूट जाती है उसके कानों में अंकुश के सिर्फ वही शब्द सुनाई देते हैं –"कर्म से भाग्य नहीं बदलता है..."

5-6 वर्ष बाद कामनी की एक जिले 'रामपुर' में पोस्टिंग होती है| वह अंकुश के जाने के बाद एक महीने तक अवसाद में रही फिर उसके पापा के समझाने पर धीरे-धीरे नॉर्मल हो गई और मेन्स क्लियर किया फिर इंटरव्यू भी क्लियर कर दो-तीन वर्षों से आईएएस के पद पर कार्यरत है| काम में व्यस्त रहने के कारण वह ज्यादा अंकुश को याद नहीं करती लेकिन वह जब भी अकेले में अंकुश को याद करती वह उदास हो जाती है मानों जीवन में निस्सार है और कभी-कभी रो पड़ती है....

कामिनी को जिले में आए अभी तो ही दिन हुए हैं| आज उसे जिला न्यायालय के प्रमुख जज के घर उनकी बेटी की शादी में जाना है| जब वह शादी में पहुंचती है तो उसका बहुत सम्मान होता है और वह एक टेबल पर बैठकर चाय पी रही होती है तभी उसकी नजर अचानक अंकुश पर जाती है..... अंकुश पूरी तरह बदल गया है.... पहले लंबे-लंबे बाल, दुबले-पतले शरीर और बिना चश्मा वाला अंकुश, अब छोटे-छोटे बाल, पेट थोड़ा उभरा हुआ और चश्मा लगाकर अंकुश 'सर' हो गया है...|

अंकुश को देखकर कामिनी अपने आप को रोक नहीं पाती है और उसकी तरफ जाकर-" हाय, अंकुश सर... (हंसती है)"

अंकुश अचानक कामिनी को देखकर स्तब्ध हो जाता है, उसको अपनी आंखों पर विश्वास ना हो रहा कि वह कामिनी जो कभी उसका आत्मविश्वास हुआ करती थी .....आज उसके सामने एक बार फिर से खड़ी है|

अंकुश और कामिनी लोगों को अनदेखा करते हुए, एकांत में जाकर, लॉन में बैठते हैं.....

कामिनी –"तुम तो अंकुश 'सर' हो गए... (हंसती है)"

अंकुश(हंसकर)-"और तुम 'आईएएस' कामिनी.."

दोनों आपस में बात करते हैं.....

कामिनी (उदास होकर)-" आई एम सॉरी.... भाग्य का पलड़ा सदैव भारी रहता है"

अंकुश (रोककर)"..न, कर्म का पलड़ा भारी होता है|"

कामिनी आश्चर्य से सोचती है-" क्या यह वही अंकुश है!!!"

अंकुश –"कर्म के अनुरूप भाग्य बनता है और वह भाग्य हमें मंजिल तक लेकर जाता है और कभी-कभी हमें वह हमारी मंजिल तक न ले जाकर हमें और ज्यादा सफल बनाता है"

कामिनी (आश्चर्य से)-" कैसे?"

अंकुश-" क्योंकि अगर उस दिन मेरा एक्सीडेंट ना होता तो आज शायद मैं अंकुश 'सर' न होता और अब मुझे अंकुश 'सर' होने में जितना आनंद प्राप्त होता है उतना शायद अंकुश 'आईएएस' होने में नहीं होता..... क्योंकि मैं आईएएस सिर्फ स्वंय बनता... आज मेरे पढ़ाये सैकड़ों बच्चे आईएएस हैं...(रुक कर मुस्कुराता है) मैं घर आया छह-सात महीनों तक कुछ नहीं किया फिर एक दिन इस कोचिंग में पढ़ाने के लिए आवेदन किया और आज हमारी कोचिंग हर साल 10-12 आईएएस दे रही है.... बाकी सब कुछ तुम्हें पता चल जाएगा दो-चार दिन में....(हंसता है)"

कामिनी (प्रसन्न होकर)-" अब बताओ मंजिल क्या है?"

अंकुश –"मंजिल व्यक्ति का लक्ष्य है लेकिन मंजिल कर्मों पर आश्रित है... अगर कर्म करोगे तो मंजिल जरूर मिलेगी और अगर मंजिल ना मिले तो पक्का है कि तुम उस मंजिल से भी ऊपर जाने वाले हो..... तुम कहती थी ना ..कर्म से भाग्य बनता है और और भाग्य से मंजिल"

कामिनी (मुस्कुराकर) –"डैट्स राइट'

फिर अचानक मौन छा जाता है.... दोनों एक-दूसरे के पूर्व के प्रेम के विषय में बात करना चाहते हैं.... पूछना चाहते हैं कि मुझे तुमने कितना मिस किया.... क्या शादी कर चुके या फिर से मुझे तुम्हें प्रेम करने का अधिकार मिल सकता है.... मौन टूटता है....

कामिनी (धीरे से)-" शादी कर चुके?"

अंकुश(हंसकर)-" तुम्हारे बिना....."

(दोनों हंसते हैं)

दोनों लॉन में बैठे महसूस कर रहे हैं कि मानो फिर उसी पीपल के वृक्ष के नीचे चाय की चुस्की के साथ परस्पर एक-दूसरे को अपने प्रेम के अधिकार-क्षेत्र में बांधने की कोशिश कर रहे हैं...

स्वतंत्रता संग्राम

अनुराग यादव
बी. ए. हिंदी (विशेष) तृतीय वर्ष

विश्व गुरु कहलाता था मै
सोने की चिड़िया थी पहचान मेरा।
वीरता थी अमित यहाँ की
दयालुता थी स्वभाव मेरा।।

मन मे छल का भाव लिए कई विदेशी आये
व्यापार का दामन थामे भारत मे पैर जमाये।
लाभ को सबसे ऊपर रखकर फूट का दामन थामा
अंततः अपने आश्रय दाता को ही जंजीरो मे बाँधा।।

अपना हित साधने मे वो इस तरह तल्लीन हुए
व्यापार के लिए आने वाले सिंहासन पर आसीन हुए।।

लालच मे अंधे होकर मानवता को ही त्याग दिया
स्त्री, बुजुर्ग, बच्चे सब पर अत्याचार किया।
धर्म, जाति, धन के द्वारा सबमे फूट फैलायी
अंततः देशवासियों को उनकी छल नीति समझ मे आयी।।

पराधीनता की जंजीर को तोड़ने सब देशवासी एक जुट हुए देश
की आजादी के खातिर बलिदान हज़ारो पुत्र हुए।
आजाद, भगत, और सुभाष ने स्वतंत्रता का बिगुल बजाया
देशभक्ति के नारों ने लाखो सोयो को जगाया।।

असहयोग, सत्याग्रह आदि ने हुकूमत की कमर तोड़ी
हारना तय देख अंग्रेजो ने भारत की गद्दी छोड़ी।
समानता, बंधुता और स्वतंत्रता पर सबका अधिकार हुआ
१९४७ मे आकर भारत आजाद हुआ।।

सत्य, अहिंसा की शक्ति को हमने विश्व को दिखलाया
धूर्त फिरंगियों को अपनी धरती से भगाया।।

विश्व मे आज भारत का जितना सम्मान है
उसके पीछे निश्चय ही एक कारण वह स्वतंत्रता संग्राम है।
अपनी धरती पर अपना अधिकार सबको होता प्रिय है
निश्चय ही हम आज भी उन वीरो के ऋणी है।।

किताबें कुछ कहना चाहती हैं

निखिल श्रीवास्तव
बी.ए. हिंदी (विशेष), द्वितीय वर्ष

हमारी सोच शिक्षा संस्कृति में रहना चाहती हैं,
आज व्याकुल कुछ किताबें कहना चाहती हैं।

किताबें पूछती हैं अब कहाँ सब ज्ञान गायब हो गया,
सभ्यता सम्मान का सब ज्ञान क्या अब हो गया,
रूढ़ियों को त्याग आधुनिक भले तुम बन रहे,
मनमुताबिक मौज करके खुला पंछी बन रहे,
सब पुराना ज्ञान क्यों अब व्यर्थ कहना चाहती हैं।
आज व्याकुल कुछ किताबें कहना चाहती हैं।

आज क्यों माँ-बाप का सम्मान मिट्टी में मिला है,
बालपन की परवरिश के बाद का अब क्या सिला है,
फिक्र अपने स्वार्थ के पंखों की कितनी बढ़ गई,
परिवार घर सब छोड़ अफने आप की धुन पड़ गई,
क्या नहीं जो ज्ञान मुझमें आज पीढ़ी चाहती है।
आज व्याकुल कुछ किताबें कहना चाहती हैं।

कर दिया क्यों बंद पढ़ना पुस्तक के संसार को,
क्यों रहे हैं त्याग बच्चे जीवन के आधार को
धूल में तहजीब है नैतिक पतन सब हो रहा
जाने कहाँ पर लुप्त है सब धीरता गंभीरता,
व्यवहार सीखो अब किताबों से बताना चाहती है।
आज व्याकुल कुछ किताबें कहना चाहती हैं।

विस्तार से अध्यन करो अब ज्ञान के भंडार का,
मार्ग खोलो आज अपने ही लिए उद्धार का,
जब विचारों में गहनता किंचित भी आ जाएगी,
उस घड़ी स्वविवेक एवं बुद्धि परखी जाएगी,
किताबें ज्ञान का सागर तुम्हे ऊँचा बनाना चाहती है।
आज व्याकुल कुछ किताबें कहना चाहती है।

डियर दोस्त

शिवानी राजपूत
बी.ए. हिंदी (विशेष), तृतीय वर्ष

डियर दोस्त,
अभी अभी मन में ढेर सारी बातें बोलने को थीं पर जैसे ही पेज पर पैन रखा सब चला गया।
चलो फिर से कोशिश करते हैं,.....
डियर दोस्त, तुमसे बहुत कुछ बोलना है और सच मानो तो बहुत कुछ सुनना भी है,
हम कुछ ही दिनों से तो साथ हैं उसमें भी कुछ, या बोले बहुत कुछ टाइम तो कोबिड के चक्कर में घर पर ही बीत गया,
फिर भी इतने से दिनों में हम इतने अच्छे दोस्त कैसे बन गए?
एक ही सेमेस्टर तो तुम्हारे साथ लंच किया था, फिर अब अकेले लंच करने का मन क्यूं नहीं करता?
10:40 होते ही तुम लोगों की कॉल का इंतजार क्यूं करने लगती हूं?.....
ऐसे तो मेरे सब दोस्त हैं पर तुम लोग कुछ खास हो,.....
क्लासेज ऑनलाइन हो या ऑफलाइन तुम लोग साथ में रहते हो तो डर नहीं लगता था, ज्वाइन करके सो जाओ तो "सर उसका माइक ऑन नहीं हो रहा" बोलकर तुम हमेशा बचा लेती थीं,
जब से क्लासेस ऑफलाइन हुई हैं पैन के दाम पता चल गए हैं,
अब 2 साल का लॉकडाउन बहुत होता है यार, एक सेमेस्टर में जितने पैन कलेक्ट करे थे कबके खत्म हो गए।
अब कुछ लोग बोलेंगे इस "कलेक्ट" शब्द को हटाकर "चोरी करे थे" लिख दो, और इन लोगों में पहला नाम तुम्हारा ही होगा हमे अच्छे से पता है।
आज भी जब कभी मैं गलत बस में बैठ जाती हूं न तो फेस पर एक छोटी सी स्माइल आ जाती है, क्यूं? इसका पता तो तुम्हे है ही।
.....तुम लोगों के साथ बस एक ही होली तो खेली थी फिर भी उससे ज्यादा रंग आज तक किसी होली मैं क्यूं नहीं लगा?
और बाकी सब भी तो तुम लोगों की तरह अजनबी ही थे फिर तुम लोग इतने अपने कैसे लगने लगे?
ऐसा क्यूं होता है जब तुम लोग साथ होते हो तो घर की कमी महसूस नहीं होती?
जब तुम सबको नहीं जानते थे तो बड़ा अजनबी था ये शहर पता नहीं क्यूं ये भी अपना सा लगने लगा है।
कभी कभी सोच कर डर जाती हूं कि ग्रेजुएशन तो पूरा होने को है, तो कॉलेज तो छूट जायेगा।
तो क्या हम सब फिर कभी नहीं मिलेंगे?
एक बार फिर ये शहर अजनबी हो जायेगा। एक बार फिर हम खुदको किसी नई जगह पर सहमा सा पाएंगे।
एक बार फिर कुछ नए दोस्त आयेंगे।
एक बार फिर हम गलत बस में चढ़ जायेंगे।
एक बार फिर एक-दूसरे को ब्लेम करेंगे और खिलखिलाएंगे।
एक बार फिर उसी हॉरर हाउस मैं चलेंगे,एक बार फिर किसी ग्राउंड में बैठ कर गप्पे लड़ाएंगे।
एक बार फिर लंच ब्रेक से पहले ही कैंटीन मैं चलेंगे, एक बार फिर कॉल करके सबको इकट्ठा करेंगे।
एक बार फिर कॉलेज के पास वाले पार्क मैं चलेंगे, एक बार फिर एक दूसरे को उसी पेड़ पर चढ़ाएंगे।
एक बार फिर बिना पते के घूमने निकलेंगे, एक बार फिर मना रहने पर भी होली मनाएंगे।
और एक बार फिर.....
एक बार फिर ये दिन कभी वापस नहीं आयेंगे।

एक लड़की

अखिल
बी.ए. हिंदी (विशेष), द्वितीय वर्ष

सड़क के किनारे खड़ी
लड़कों से बतियाते हुए,
हाथ में आधी जली हुई सिगरेट लिए
'एक लड़की'
उस रूढ़िवादी समाज को चुनौती दे रही है
जिसने स्त्री के इस रूप की
कभी कल्पना भी नहीं की थी
इसी बीच, उस लड़की की इन हरकतों को
किसी ई-रिक्शा में बैठा एक दंपत्ति
अनिमेष दृष्टि से देख रहा है
और उसके चरित्र रूपी गर्म लोहे पर
अपने संकीर्ण ज्ञान के हथौड़े से
प्रहार कर रहा है
तनिक भी यह सोचे बिना कि
लड़कों के साथ संवाद तो नॉर्मल बात है
और सिगरेट 'न छूटने वाली एक आदत'...

साम्य की स्थिति और बिखराव

अमन प्रताप सिंह
परास्नातक हिंदी, पूर्वार्द्ध

जब कभी मैं इन दो शब्दों (साम्य और बिखराव) से टकराता हूं तो न जाने अनायास ही मन मस्तिष्क में अनेकों प्रश्न कौंधते हैं। वह प्रश्न कभी कभी स्वानुभूति से भी उपजते हैं तो कभी परानुभूति से, जो अन्तर्मन को झकझोरते हुए सोचने पर विवश कर देते हैं। ज़िन्दगी बिल्कुल वीणा के तारों जैसी है ज्यादा कसने और स्वतंत्र छोड़ देने से अपेक्षानुसार ध्वनि नही देती ठीक वैसे ही जैसे तराजू के दो पलड़ों में एक का ज्यादा ऊपर या नीचा हो जाना कभी कभी तराजू को तोड़ देता है। जब तक साम्य में है तब तक आनंद है जैसे रोशनी से निकलने वाली किरणे जीवन के किसी कोने पर पड़ती हैं तो निश्चित ही उसे प्रकाशवान बना देती हैं संसार की हर एक वस्तु में नवीनता दिखाई देती है, रंगों की चमक पहले की अपेक्षा अधिक बेहतर लगती है और वह आंखों को सुख प्रदान करती हैं, संगीत के स्वरों में ऐसा राग उत्पन्न हो जाता जो मन को आनंदानुभूति के सागर में हिलकोरे मारने के लिए विवश कर देता है, वर्षा का पानी जब शरीर के किसी भाग पर पड़ता है तो रोम रोम पुलकित हो उठता है, प्रकृति का हर दृश्य ऐसे आलम्बन तैयार करता है कि संसार की हर वस्तु में सिर्फ सुख और प्रसन्नता ही दिखाई देती है।

मनुष्य एक क्षण के लिए समस्त कष्टों को किसी कोने में फेंककर सुख की लिप्सा में निकल पड़ता है। फिर चाहे वह सुख क्षणिक हो या दीर्घकालिक। परंतु जब वही रोशनी की किरणें तीरछी होने लगती है, साम्य अपने स्थान से हटकर जीवन की अभिक्रियाओं को मन मुताबिक परिणाम न देकर इधर उधर होने लगता है, तब शुरू होता है संघर्ष का अध्याय, खैर ज़िन्दगी तो संघर्ष की ही अभिलाषा रखती है। इन्हीं उथल पुथल को जब हम अनुभव की ताक पर रखकर देखते हैं तो पाते हैं कि विभिन्न कृत्य ऐसे हैं जिनमें हमने कुछ न कुछ अवश्य पाया है क्योंकि -अनुभव वह सत्य है जिसे कभी झुठलाया नहीं जा सकता। इस अध्याय में शुरू होती हैं जीवन की वह जटिलताएं जो हमारी आँखों के प्रत्यक्ष व परोक्ष चल रही होती है जिन्हें हम जानते तो हैं पर स्वीकार करने में हिचकिचाते हैं। इनसे दूर होने के अनेकानेक उपाय भी मस्तिष्क में हलचल पैदा करते हैं पर मन की स्थिति उस बिंदु पर जाकर रुक जाती है जहाँ पर हम चीजों को नज़रन्दाज़ करना प्रारंभ कर देते हैं।

ठीक इसी क्षण बिखराव, अकेलापन, निराशा और मन में उपजी हुई हीनता के कारण मन विलाप की अवस्था मे आ जाता है। एक निरंतर मौन के दौर में कभी कभी इससे निर्मित अनुत्तरित मुस्कान चेहरे के हर रूप को सच्चाई के साथ दिखाती है आंखे बंद होने पर खुद का विश्लेषण करती हैं और खुली होने पर दूसरों का, ये विश्लेषण ही है जिसके ऊपर मन और मस्तिष्क की सीमाएं अपना अपना कृत्य पूर्ण करती हैं। अर्द्ध अंधकार में धुंधलाते चेहरे हृदय की पीड़ा को आंखे में दिखाने का प्रयास करते हैं जब अंधकार पूर्ण हो जाता है तो पीडा आंसू बनकर बह जाती है। परंतु यह आंसू ही किसी रोज अंधकार की कलिमा में मोती की तरह चमकते हैं और हमे आभास कराते हैं कि अर्द्ध अंधकार शेष है चेहरे की हँसी को फिर से पूर्ण करने के लिए, यह तैयार है फिर से उसी साम्य में जाने के लिए जिससे छूटकर ये मौन की अवस्था उत्पन्न हुई थी।

बस जरूरत है तो खुद के अंतर्मन में चल रहे प्रश्नों के लिए ठीक प्रकार से उत्तरों की खोज, जो हमें आभास कराएं कि साम्य के टूट जाने से, अकेलेपन और बिखराव के आ जाने पर भी जिंदगी की किसी अभिक्रिया की गति मन्द नहीं पड़ सकती, संघर्ष के पनपने से ज़िन्दगी का कोई हिस्सा दुर्बल नहीं होता, वल्कि वह पहले से और ज्यादा सबल बनके सामने आएगा। और मन व मस्तिष्क दोनो की भावात्मक एवं विचारात्मक अवस्थाएं वीणा के तारों की गति को फिर से ठीक से बांध देंगी और संगीत अपने चरम विंदु पर होगा।

"प्रत्येक देश का साहित्य उस देश के मनुष्यों के हृदय का आदर्श रूप है।
जो जाति जिस समय जिस भाव से परिपूर्ण या परिप्लुत रहती है वे सब उसके भाव
उस समय के साहित्य की समालोचना से अच्छी तरह प्रगट हो सकते हैं।"
~ बालकृष्ण भट्ट

विविध

ज्योति पाल
बी. ए. हिंदी (विशेष), द्वितीय वर्ष

एक विविध आयाम है ये
कि विविधता जोड़ती है हमें।
यह और कहीं नहीं होता
ना चीन में, ना अमेरिका में और ना ही यूरोप में।
ये विविधता नहीं हमारी एकता का परिमाण है
कि एक डोर जो अलग अलग रंग की है
फिर भी एक हो जाती है
वह रंग उसके हिस्से नहीं करता बल्कि उसकी सुन्दरता को
दर्शाता है और बाकियों को भी आदेश देता है
कि सुन्दरता एक जैसे हो जाने से ही नहीं, अलग अलग दिखने से भी होती है।
यहां हर चीज के रंग – रूप में एक अलग खुशबू आती है
जैसे बयां कर रहे हो सब अपनी अपनी काबिलियत को और
वहीं दूसरी ओर जहां इनको देख आखें तृप्त हो जाती है
अपनी जीत को परिलक्षित करती आगे है बढ़ती चली जाती हैं
ये डोर और इसके अंग अंग से आती खुशबू।
एक अलक्षित सूर्य की ओर जाती हैं यहां के जवानों की आवाजें
– जय हिन्द की हुकार के साथ और बढ़ती है चली जाती है
सीमाओं के पार तक।
इनकी बुलंद ध्वनियों को बांध नहीं पाया कोई घुसपैठ सिपाही
और ना ही रोक पाई कोई मनुष्यों द्वारा बनी द्वेष की लकीर
ना ही कभी कोई सीमा इन सिपाहियों को ही रोक पाई अपनी
जीत सुनिश्चित करने से।ये बुलंद करते हैं हौसले उन करोड़ों लोगों
के जो देखते हैं इनको घर बैठ कर
और सीखते हैं प्रतिद्वंदी को उसके ही पाले में हराना।
ये वे हैं जिन्हें देख हर व्यक्ति गौरपूर्ण हो उठता है और सम्मान
देता है अदब के साथ
ये विविध हैं।
अपने रूप में, अपने रंग में
अपनी खुशबू में, अपने स्वाद में
अपनी भाषा में, अपने पहनावे में
अपने त्यौहारों में, अपने संस्कारों में
अपने रीति रिवाजों में...
पर एक कड़ी जो इन्हे जोड़ती है वह इनकी यह विविधता ही है।
इसलिए हम कह सकते हैं ये सब विविध हैं पर एक हैं।

भटकाव

अनुराग यादव
बी. ए. हिंदी (विशेष), तृतीय वर्ष

जब है चाह मंजिल की तो भटकाव क्यू है
अस्थिरता मे ही ठहराव क्यू है।
सुना है चलना होता है वक्त के साथ
फिर उस वक्त मे बदलाव क्यू है।।
सब रास्तो को जब जाना है एक ही मजिल्
तब उन रास्तो मे घुमाव क्यू है
जब है चाह मंजिल की तो भटकाव क्यू है।।
इरादे तो नेक है पर उसमे अवसादो का जमाव क्यू है
घर परिवार रिश्ते नाते सब निभाने का तनाव क्यू है
मौसम तो शांत है फिर अंदर उमडा तूफान क्यू है
जब लक्ष्य कुछ और है तो दिल मे दूसरा मेहमान क्यू है
जब चाह है मंजिल की तो भटकाव क्यू है।।
हा नही सुनना हजारों बातो को
पर क्या चिंगारी चाहिए इन इरादो को
गुजर के वक्त तो आता नही
फिर क्यो बर्बाद किया जाये इन रातों को
सब कुछ जानते हुए भी ये बहाव क्यू है
जब है चाह मंजिल की तो भटकाव क्यू है।।।।

इच्छा

सूर्या
बी. ए. हिंदी (विशेष), तृतीय वर्ष

आँखों का पानी रिस रहा है
तन की थकान फ़ीकी चाय की इच्छा है
ग़म की बेबसी को पुराने चाय की बैठकों की।
(जीवन के आधे पड़ाव में)

मन कहीं नहीं लग रहा
बस कभी-कभी ठहरा हुआ लगता है
समय अपनी गति बनाये हुए है
ख़र्च होते हममें सभी अपनी किश्तें सहेज रहे हैं
चार दीवारों में नींद नहीं अफनाहट प्राप्त होती है
कहीं चले जाने की तीव्र इच्छा होती है।

भाषा, साहित्य, संस्कृति और राष्ट्र निर्माण

नितेश कुमार पाण्डेय
बी. ए. हिंदी (विशेष), तृतीय वर्ष

भाषा वह माध्यम है जिससे लोगों की संस्कृति का संचार होता है। लोगों की संस्कृति का सबसे प्रभावी इंजन उनकी मातृभाषा है। स्वदेशी भाषाएं संस्कृति और आत्म-पहचान की निधि हैं। दूसरे शब्दों में "भाषा इतिहास और आत्म-पहचान का सूचक है"। यह एक अनिवार्य सांस्कृतिक विरासत है जिसके साथ सभी प्रकार की मानवीय बातचीत की जाती है। यह लोगों के हृदय की कुंजी है। अगर हम चाबी खो देते हैं, तो हम लोगों को खो देते हैं। यदि हम चाबी को संजोकर रखते हैं और इसे सुरक्षित रखते हैं, तो यह धन या संपन्नता के द्वार खोल देगी, इस प्रकार राष्ट्रीयता विकास लाएगी।

यह विकास शिक्षा में वृद्धि (यानी बौद्धिक विकास), राजनीति, अर्थव्यवस्था, विज्ञान और प्रौद्योगिकी से होता है। शैक्षिक प्रक्रिया में, भाषा मुख्य स्तंभ है जिसके माध्यम से मनुष्य को कार्यक्रमों की योजना, निर्देश और मूल्यांकन करना होता है। समाज में अपनी आकांक्षाओं के संबंध में व्यक्तियों के विकास का अर्थ है 'राष्ट्र का विकास'। व्यक्तियों के साथ बातचीत के माध्यम से व्यक्ति शैक्षिक, सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक और सांस्कृतिक रूप से विकसित होते हैं। राष्ट्रीय विकास एक क्रमिक और उन्नत सुधार है,राष्ट्र के सामाजिक-राजनीतिक जीवन में प्रगतिशील परिवर्तन। राष्ट्रीय विकास से तात्पर्य आंतरिक एकता,एकीकरण, एकता, आर्थिक कल्याण, सरकार में सामूहिक भागीदारी और शैक्षिक विकास के संदर्भ में राष्ट्र के विकास से है, जो हमारे पथप्रदर्शक हैं। भाषा शैक्षिक विकास में एक उत्प्रेरक है जो राष्ट्रीय विकास का एक महत्वपूर्ण अंग है। किसी भी राष्ट्र में गुणात्मक शिक्षा विलासिता से नहीं, बल्कि राष्ट्रीय विकास की अनिवार्यता से आती है। राष्ट्रीय एकता प्राप्त करने के लिए मातृभाषा में शिक्षा के महत्व को समझते हुए "नई राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020"(NEP 2020) में इसे अपनाया गया है।

"राष्ट्रीय शिक्षा नीति" बताती है कि प्राथमिक विद्यालयों में शिक्षा की भाषा प्रारंभ में बच्चों की मातृभाषा में होनी चाहिए या तत्काल समुदाय की भाषा में। स्वदेशी भाषा सबसे महत्वपूर्ण उपकरण है जिसके साथ समाज संगठित है, और जिस भाषा के साथ भाषा को शामिल किए बिना राष्ट्रीय विकास की बात करना शायद ही संभव है। बहुभाषी शिक्षा निरक्षरता को मिटाने में सक्षम है। यह राजनीतिक जागरूकता और सामाजिक-राजनीतिक स्थिरता प्रदान करता है।

देशी भाषाओं के प्रयोग से सरकार के कार्यक्रम और नीतियां जमीनी स्तर तक पहुंचती हैं। राष्ट्रीय एकता काफी हद तक एक-दूसरे की भाषा और संस्कृति की आपसी समझ पर निर्भर करती है। यही कारण है कि भारत सरकार राष्ट्रीय एकता के हित में मानती है कि प्रत्येक बच्चे को अपनी मातृभाषा के अलावा दो प्रमुख भारतीय भाषाओं में से एक सीखने के लिए प्रोत्साहित किया जाना चाहिए। एकता का अर्थ है शक्ति और एकजुटता, और यह भाषा ही है जो लोगों को सशक्त और एकजुट करती है। भाषाएँ इसलिए एक राष्ट्र को शक्ति प्रदान करती हैं।

राष्ट्र के पुनरुत्थान में साहित्य की भूमिका

भाषा, साहित्य और संस्कृति (चाहे विदेशी या स्वदेशी) के बीच बीच एक अच्छी तरह से स्थापित त्रिपक्षीय संबंध रहा है। भाषा के बिना कोई भी साहित्य नहीं है। संस्कृति और भाषा अविभाज्य हैं और तीनों पारस्परिक रूप से एक-दूसरे से जुड़े हुए हैं। वे मानव शिक्षा और राष्ट्रीय विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। साहित्य एक कला है जो मार्गदर्शन करती है और निर्देश देती है। यह लोगों को खतरे की चेतावनी देता है, और लोगों की आंखों को व्यापक अनुभवों और इन अनुभवों की गहरी समझ के लिए खुलकर निर्देश देता है। साहित्य परिस्थितियों, अंतःक्रियाओं और विरोधों को प्रस्तुत करता है। यह मूल्यों और दृष्टिकोणों की एक विस्तृत श्रृंखला का सुझाव देता है।

एक जातीय समूह और उनकी संस्कृति को समझने के लिए किसी को उनके मौखिक और लिखित आख्यान, नाटक और कविता की ओर मुड़ना पड़ सकता है। साहित्य को अपने समाज और समय की एक प्रामाणिक दर्पण छवि के रूप में माना जाता है। व्यंग्य, नीतिवचन और प्रतीकवाद के माध्यम से साहित्यकार समाज में सामाजिक बुराइयों के बारे में विचारों और भावनाओं का संचार करते हैं, जिसकी वे आलोचनात्मक भाषा के साथ आलोचना करते हैं।विवेक, उदारता, धैर्य और ज्ञान में एक सबक है, जो मानव जाति के मार्गदर्शन और स्थिरता के लिए अनिवार्य हैं।

समाज में साहित्यिक कलाकार भ्रष्टाचार, हत्या, राजनीतिक ठगी, धार्मिक असहिष्णुता, दमनकारी शासन या तानाशाही, किसी भी प्रकार के मानव अवक्रमण और अलोकतांत्रिक प्रथाओं जैसे असामाजिक व्यवहारों की आलोचना करने के लिए भाषाओं का उपयोग करते हैं।

ऐतिहासिक साहित्य के माध्यम से समाज के बारे में हमारे ज्ञान का विस्तार होता है। यह ज्ञान लोगों को नए और मानवतावादी, सामाजिक-राजनीतिक और आर्थिक पाठ्यक्रम के लेखन करने में मदद करता है, जो एक नई विश्व व्यवस्था की ओर ले जाता है। यह राष्ट्रीय विकास में साहित्य का योगदान है।

संस्कृति को समाज की कला, विचार और परंपरा की विशेष प्रणाली के रूप में परिभाषित किया गया है। यह लोगों के जीवन का संपूर्ण तरीका है। सामाजिक विरासत व्यक्ति अपने समूह के सदस्य के रूप में प्राप्त करता है। यही संपूर्ण दृष्टिकोण और धारणा है।

भाषा चाहे विदेशी हो या स्वदेशी, यह प्रकार से लोगों की पहचान का एक अमिट निशान है। हमारे लोगों के मूल मूल्य राष्ट्रीय सुधारों की धुरी होनी चाहिए, हमारे पारंपरिक मूल्यों को ईमानदारी में समाहित किया जाना चाहिए।

पारदर्शिता, संस्थाओं के प्रति सम्मान, गठित प्राधिकर, समानुभूति और जीवन की पवित्रता; ये मूल मूल्य लोगों की पहचान, संस्कृतियों, परंपराओं और प्रणालियों में परिलक्षित होते हैं, जो अक्सर उनकी भाषाओं में समाहित होते हैं।

एक बच्चा जो समाज के सकारात्मक मूल्यों के मार्गदर्शन में बड़ा होता है, उसके पास एक स्वस्थ और प्रगतिशील मस्तिष्क होगा। इसलिए, भाषा, साहित्य और संस्कृति के शिक्षण और सीखने से शिक्षार्थी को समाज की समस्याओं की समझ हो सकेगी।

इससे हम भाषा, साहित्य और संस्कृति के महत्व को तीन परस्पर संबंधित समाजशास्त्रीय आधार के रूप में अधिक महत्व दे सकते हैं, जिनका दूध मनुष्य को स्वस्थ शरीर में एक स्वस्थ आत्मा को विकसित करने के लिए पीना चाहिए।

निष्कर्ष

भारत में विभिन्न भाषाओं की अत्यंत समृद्ध परंपरा है। उनके साहित्य ने यहाँ के सामाजिक, नैतिक, आथिर्क और राजनैतिक क्षेत्र को हमेशा संबल दिया है और सभ्यता, जीवन-मूल्य तथा परंपरा की रक्षा की है। साहित्य समाज में सौहार्द, एकता और जागरूकता फैलाता है। इसलिए राष्ट्र के पुनरुत्थान में में साहित्य की महत्वपूर्ण भूमिका है।

"साहित्य मानव-जीवन से सीधा उत्पन्न होकर सीधे मानव-जीवन को प्रभावित करता है।
साहित्य में उन सारी बातों का जीवन्त विवरण होता है, जिसे मनुष्य ने देखा है,
अनुभव किया है, सोचा है और समझा है।"
~ आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी
(साहित्य सहचर)

❁

हित अनहित पसु पच्छिउ जाना।
मानुष तनु गुन ग्यान निधाना।।

भावार्थ :- अपना हितू (मित्र) और अनहित करने वाले शत्रु को तो पशु, पक्षी भी जानते हैं मानव का शरीर तो ज्ञान और गुण का भंडार है | मनुष्य प्रेम और बैर को सहज ही पहचानता है |

नव आह्वान

विकास चौधरी
बी. ए. हिंदी (विशेष), द्वितीय वर्ष

जन- जन के मन में भरे
निज देश के यशगान को,
आओ सब मिल पुनः करे
भव्य हिंदुस्तान को।

हम ज्ञानधारी जगतगुरु
हम विश्वभर में वीर थे,
जन जन यहाँ के सजग थे
वे वीर थे गंभीर थे।

सूर, तुलसी, रैदास, कबीर
कुछ भव्य भक्त महान थे,
सृष्टि के संधान में
विद्वान ही विद्वान थे।

वर वीर विक्रम थे यहाँ
बौधायन थे समसुविज्ञ थे,
आर्यभट्ट गणितज्ञ और
चाणक्य तुल्य नितिज्ञ थे।

वह अमित अलौखिक ज्ञान हम से
आज कैसे खो गया,
जो देश कभी उत्तीर्ण था
वह छीर्ण कैसे हो गया

अंतर तन मन जीवन में
अब भरे राष्ट्रहित ध्यान को,
आओ सब मिल पुनः करे
भव्य हिंदुस्तान को।

ऋषिगणों की भूमि पर
दुरभिक्ष सा बहुचाल है,
स्वछन्द स्वर्ण युग जहाँ कभी था
आज क्यों दुष्काल है ?

मिट गया द्वेष, दयनीय, भाव से
हमें विश्व है देखता
हे भाइयों सुगठित रहो
है उचित नहीं अनेकता।

पुनः सिखाएं ज्ञान कौशल
नवकला संसार को,
पुनः प्रसारित करे विश्व में
स्वदेश के व्यापार को।

उद्योग उन्नत हो सभी
उत्पाद में विस्तार हो,
स्वाधित्र स्वतः निर्मित करे हम
दक्षतम संचार हो।

रक्षित रहे भूचाल से
सकुशल समूचे प्रान्त थे,
सबलोग भाव इस देश के
नित शांत और संभ्रांत हो।

पुनः सुशोभित आज करें
स्थिल शुष्क उद्यान को,
आओ सब मिल पुनः करें
भव्य हिन्दुस्तान को।

सीख लो

राहुल मौर्य
बी. ए. हिंदी (विशेष), द्वितीय वर्ष

तर्ज़ पे रफ्तार के तुम भी संभलना सीख लो,
या कि दहको नभ पे चढ़कर, या कि जलना सीख लो।

हर घड़ी बस धूप का साया न होगा राह में,
ए मुसाफिर अब अंधेरों में निकलना सीख लो।

ग़र जो लहरों से उलझने का इरादा है मियां,
छोड़ दो फिर कश्तियां पानी पे चलना सीख लो।

तुम चमकना चाहते हो ख़ल्क में बेदाग तो,
वक्त की तासीर समझो और ढलना सीख लो।

रौशनी- ओ -जिंदगी में एक ज़ामा तय करो,
मोम को पत्थर करो या की पिघलना सीख लो।

कशमकश-ए-ज़ीस्त 'राहुल' वक्त रहते हाल को,
कुछ बदल उसने दिया कुछ तुम बदलना सीख लो।

आत्महत्या - निवारण या बेवकूफी

आयुष द्विवेदी
बी. ए. हिंदी (विशेष), तृतीय वर्ष

भीगती मसों और फूलती नसों के दिनों में, घर से सैकड़ो किलोमीटर दूर, एक छोटे से दस बाई दस के कमरे में, निपट अकेला बैठकर रो रहा एक किशोर, अपने मन मस्तिस्क में चल रहे झंझावातों और चक्रवातों को झेल रहा होता है, अपनी मनः स्थिति को कोस रहा होता है। किसी छोटे बड़े सपने के ख़त्म हो जाने के कारण हर वक़्त अपने को हीन समझ रहा होता है और उसके बाद वह एक ऐसा फैसला लेता है जिसे लेने का उसे कोई हक नही है। पहले वह एक ख़त लिखकर छोड़ता है और फिर इस दुनिया को छोड़ देता है। वो अपने आखिरी ख़त में लिखता है कि - मेरे पास दूसरा कोई विकल्प नही बचा था, यही एक मात्र समाधान है, मैं आत्महत्या कर रहा हूँ, मुझे माफ़ करना और वह यह कहकर मर जाता है। मेरा यह लेख उसी आखिरी ख़त का जवाब है की आत्महत्या कोई समाधान नही है। जरा सोचिये की किसी कमरे में एक पंखे से एक रस्सी बंधी हुई है, उस पर एक लड़का लटक रहा है, उसके निर्जीव शरीर के निर्बल और शक्तिहीन हाथ पैर है जो हवा में झूल रहे हैं, आंखे फटी हुई है, गर्दन की नसें टूट चुकी हैं और गालों पर आंसुओं की कुछ बूंदे सूखकर जम गयी हैं। वह लड़का एक बार के लिए तो मर गया, लेकिन उसकी फटी हुई आँखें उसकी माँ का फटा हुआ कलेजा बनकर जिन्दा रहेंगी, उसकी गर्दन की टूटी हुई नसें उसके बाप के टूटे हुए वो तार बनेगी जो कभी अब झंकृत नही होंगे, उसके गालों पर सूख चुके आंसुओं के गोले उसकी बहन के आँखों से हरदम बहा करेंगी और उस निर्जीव शरीर के हाथ पैर जो हवा में झूल रहें हैं उसके भाई के हिम्मत को जिंदगी भर तोडा करेंगे और एक अल्पकालीन आवेश के कारण लिया गया उसका ये निस्तुर निर्णय उसके जैसे लाखों युवाओं को इस तथा कथित समाधान के लिए प्रेरित करेगा। ये कैसा हल है जिसमें अपनों का बर्बाद होता हुआ कल है। खुदखुशी करने वाला इन्सान एक बार को तो मर जाता है, लेकिन उसके यार दोस्त, उसके घर परिवार के लोग, उसके रिश्ते -नाते के लोग बार- बार मरा करतें हैं। वो हर वक़्त खुद को अपराधी समझतें हैं और इस संत्रास के कारण जीते जी मरे हुए के समान होते हैं। आकडे बताते हैं की अत्याधिक खुदखुशी का कारण अकादमिक विफलताएं होती हैं। इन आकड़ों से उठती हुई चीखें इस विषय को और भी गंभीर बनाते हैं। डॉक्टर्स और मनोवैज्ञानिको का ये कहना है की अगर उन तक सही वक़्त पर किसी प्रकार की भी मदद, सहानुभूति और मार्गदर्शन पहुँचता तो उनकी जान बचाई जा सकती थी। आकड़ों का स्पष्ट मानना है की दस में से आठ हत्याएं स्पष्ट संकेतों के बाद होती हैं। हमारा यह नैतिक दायित्व बनता है की जो हमारे आस- पास में मानसिक तनाव या मानसिक दबाव से ग्रसित लोग हैं उनकी बातें सुने उन पर विश्वास जताएं, उनका हिम्मत बढाए। आत्महत्या मनचाही मौत नही है यह अनचाही मौत है। मरना उन्हें भी अच्छा नही लगता लेकिन घबराकर एक क्षणिक आवेश में यह निर्णय ले लिया जाता है। उन्हें ये बताएं की यह कोई समाधान नही है।अब तो घबराकर ये कहतें हैं की मर जायेंगे। मरकर भी चैन नही मिला तो किधर जायेंगे ? सही वक़्त पर उन तक पहुँचाया गया मानसिक प्रोत्साहन उनकी जान बचा सकता है। जो खुदख़ुशी करना चाहते हैं उनके लिए मेरा यही सन्देश है की जब उन्हें लगे की यही एक मात्र उपाय है, खुदखुशी ही एक मात्र समाधान है तब अपनी आँखें बंद करके, अपनी भविष्यदृष्टा कल्पना शक्ति से अपनी मौत का मंजर देखिये। अगर सफ़ेद कफ़न ओढ़कर जमीं पर पड़ी अपनी लाश के पास, सुधबुध खोकर बेहोश हो चुके अपने माँ बाप, रोती कलपती बहने और दहाड़ें मारकर चीखता अपना भाई नजर आ जाता है तो उनके होठो के तवस्सुम को अपने जीने का बहाना बना लेना। अपने शौक, अपने सपने जो अपनी मौत के साथ किसी और माइने में पूरे हो रहें हैं, उन्हें पूरे करने को अपने जीने का बहाना बना लेना। अपनी कला को विस्तार देने को, आगे के जीवन को निहार लेने को, दूसरों को उपकार देने को, कोई भी बहाना बना लेना। जीने के लाखों बहाने हैं। अगर फिर भी कोई बहाना न मिले तो तो बचपन में मास्टर जी की मार से बचने के लिए कोई बहाना गढ़ लिया करते थे, इस बार मौत से बचने के लिए बहाना गढ़ लीजिये। लेकिन मरना इसका उचित समाधान नही है। अकादमिक विफलता कोई विफलता नही होती।विश्वनायक माने जाने वाले लोग कभी अपने अकादमिक छेत्र में सफल नही हो पाए थे। जिंदगी यहीं तक नही है, सफलता का पैमाना सिर्फ यही नही है। महत्मा गाँधी, मार्क जकर्वर्ग, थॉमस अलवा एडिसन, सचिन तेंदुलकर, रबिन्द्र नाथ टैगोर, बिल गेट्स अपने स्कूल कॉलेज की परीक्षाओं

में कभी सफल नही रहे थे. लेकिन जीवन में अपने अपने क्षेत्र में उत्कर्ष तक पहुंचे, परकास्ठाओं तक पहुंचे। अतः छोटी -मोटी विफलताओं को दिल से न लगायें, छोटे- मोटे सपनो के पीछे जीवन बर्बाद न करें। गोपाल दास नीरज जी की पंक्तियाँ हैं की -

"छिप छिप अश्रु बहाने वालों,
मोती व्यर्थ लुटाने वालों,
कुछ सपनो के मर जाने से जीवन नही मरा करता है,
सपना क्या है ?
नयन सेज पर सोया हुआ आँखों का पानी
और उसका टूटना जूं जागे कच्ची नींद जवानी,
गीली उमर बनाने वालों,
डूबे बिना नहाने वालो,
कुछ पानी के बह जाने से सावन नही मरा करता है,
चंद खिलौनों के खो जाने से जीवन नही मरा करता है,
कुछ दीपों के बुझ जाने से आंगन नही मरा करता है,
कुछ मुखड़ो के की नाराजी से दर्पण नही मरा करता है,
कुछ सपनो के मर जाने से जीवन नही मरा करता है .....

जीवन जीना भी एक कला है, इसको जीने का हुनर जो जान गया वह समुच्चय विश्व को जीतने का हुनर रखता है। हम सब एक दुसरे से अलग हैं हम सबकी पहचान अलग है। बस जरुरत है तो खुद की एक पहचान बनाने की जिस दिन आपने अपनी एक पहचान बना लेंगे उस दिन आपको जिंदगी का वास्तविक मूल समझ आयेगा और जीवन जीने का आनंद भी।

'पाज़ेब' एक मार्मिक कथा

यशस्वी वशिष्ठ
बी. ए. हिंदी (विशेष), प्रथम वर्ष

यह बात तब की है जब मैं कक्षा पाँचवीं का विद्यार्थी था। मैं अपने पिताजी के साथ रोज शाम को गौशाला जाया करता था।

"गोनू चालां के बेटा.....
आयो पिताजी ..... हाँ, चालो चालां.....
अरे कूपन तो भूल ही गय्यो..... इबि आयो लेके.....
हाँ,चालों पिताजी....."

ये संवाद रोज पिताजीऔर मेरे बीच होता था। मैं रोज शाम घर के निकट स्थित गौशाला में दूध लेने जाया करता था।

यह गौशाला ऐतिहासिक और मनोरम दृश्यों से युक्त था। इसमें आठ सौ के करीब गाएँ, एक मंदिर और कुँए के साथ-साथ काफी खुला मैदान भी था।

हम जैसे ही गौशाला पहुंचे तो पिताजी ने एक ओर इशारा किया और कहा, "बेटा ये जो कुआँ है ना.... इस पर मैं अपने बापू जी के साथ आता था। मैं जब छोटा था तो ये कुआँ पानी पीने के काम आता था। परंतु अब ये कुआँ केवल बच्चों को डराने के काम आता है कि अगर शैतानी की तो भूत वाले कुँए पर ले जाएँगे..... हाआआ आ आ।"

इसी बातचीत के दौरान हम गौशाला के प्रांगण में पहुँच गए। वहाँ पहुँचते ही मुझे अत्यंत आश्चर्य हुआ कि वहाँ अनेक गाएँ भ्रमण कर रही थीं। और उनके पैरों से उड़ रही मिट्टी (बालू मिट्टी और गोबर का मिश्रण) वातावरण में अद्भुत दृश्य पिरो रही थी। गोधूलि बेला का ये मनोरम दृश्य वहाँ उपस्थित सभी लोगों के हृदय को आनंद की अनुभूति करा रहा था।

चारो ओर के परिवेश का आनंद उठाते हुए हम गौशाला के कार्यालय कक्ष तक पहुँच गए।

वहाँ जाते ही मैनेजर ने खड़े होकर पिताजी का अभिवादन किया और कहा - बैठिए डॉक् साहब!

मेरे पिताजी एक सरकारी सेवानिवृत्त पशु चिकित्सक थे जो प्रायः गौशाला में अपनी निःशुल्क सेवा देते थे। पिताजी के पीछे-पीछे मैं भी कार्यालय कक्ष में घुस गया और अपने पिताजी का रौब दिखाते हुए मैंने मैनेजर से कहा -' देशी गाय का दूध देना और ये लो कूपन'। मैनेजर ने चंचल भरी मुस्कान से मुझे देखा और कहा - क्यों नहीं बेटा।

तभी वहाँ खड़े दो-चार लोग पिताजी को बोल रहे थे डॉक् साहब - बिना माँ के नन्हीं बछिया भला कैसे जीवित रहेगी? देखो हरि की क्या लीला है।

मैंने पिताजी से पूछा कि क्या हुआ, तो उन्होंने कहा कि एक छोटी नन्हीं अंधी बछिया आई है जिसकी माँ नहीं है। मैंने पिताजी से उसे दिखाने का आग्रह किया तो उन्होंने वहाँ खड़े एक कर्मचारी से कहा, इसे दिखाकर लाओ! मैं जब उस नन्ही अंधी बछिया के पास पहुँचा तो देखा किवास्तव में वो आकर्षण का

केंद्र थी। उसका लाल भूरा रंग, सुंदर नीली आँखें, छोटी काली पूँछ उसकी शोभा के परिचायक थे।

वहाँ खड़े दो व्यक्ति उसे पिसा हुआ गुड़ खिला रहे थे परन्तु वह अपना मुँह भी नहीं खोल रही थी। मैंने जब अपनी नन्हीं-नन्हीं हथेलियों पर पिसा हुआ गुड़ रखकर उसके जीभ के पास किया तो वो धीरे-धीरे उसे चाटने लगी।

यह मेरे और वहाँ खड़े सभी लोगों के लिए आश्चर्य का विषय था। मुझे उससे थोड़ा-थोड़ा डर अवश्य लग रहा था परन्तु अब वो मेरी पक्की दोस्त बन चुकी थी। मैंने उसका नाम 'दोस्त ' रखा। मैं रोजाना शाम उसे गुड़ और दलिया खिलाने जाता। तीन से चार महीने बीत गए और अब वह धीरे-धीरे बड़ी होने लगी।

मैंने अपनी स्कूल बैग से रक्षाबंधन पर रखी हुई राखी निकाली और उसके घुंघरुओं से छोटी-सी 'पाजेब' बनाई। और दोस्त के आगे वाले दाहिने पैर में पहनाई।

अब जब भी वो मेरे पास आती तो उसके घुंघरू बजने लग जाते। चूँकि वह अंधी थी परन्तु वह मेरी एक ही आवाज में मेरे पास आ जाती थी। उसके प्यारे घुंघरुओं की आवाज मेरे हृदय के तारों को झनका देती।

धीरे-धीरे मौसम में बदलाव आने लगा। जेठ का आधा महीना बीत चुका था और मुश्किलों भरा आधा महीना बीतना बाकी था।

मैं जिस जिले में रहता था वहाँ अत्यधिक गर्मी पड़ती थी। मुझे दोस्त के स्वभाव में कुछ सुस्ती-सी नजर आने लगी। धीरे-धीरे उसने दलिया - गुड़ भी खाना बंद कर दिया। मैंने उसे गुड़ खिलाने की कोशिश की तो उसने गुड़ मुँह में रख लिया पर जुगाली नहीं की। मैंने देखा वहाँ पास में टूटी हुई पाजेब भी पड़ी थी । मैंने उसे जेब में रखा और सोचा उसे कल ठीक कर वापस पहना दूँगा। दोस्त की ऐसी हालत मुझे अत्यंत पीड़ा दे रही थी। वो एक कोने में एकटक नजर टिकाए हुए बैठी थी। मैंने जब इसके बारे में मैनेजर से पूछा तो उसने कहा कि उसे 'लू' लग गई है। तभी मुझे याद आया कि जब कभी मुझे लू लगती थी तो मेरी माँ मुझे कच्चे आम का पानी निकालकर देती थीं। मैं घर गया और माँ का बनाया हुआ कच्चे आम का पानी उसके लिए लेकर आया। मैंने उसे धीरे-धीरे पानी पिलाया पर उसके स्वास्थ्य में मुझे कतई सुधार नजर नहीं आया। मुझसे यह दृश्य देखा नहीं गया और मैं रोते-रोते घर आ गया।

अगले दिन जब मैं वहाँ गया तो मेरी दोस्त वहाँ नहीं थी। मैंने मैनेजर से पूछा तो उन्होंने कहा वो कृष्ण को प्यारी हो गई। मैंने कहा," ये कृष्ण कौन है, वो तो मुझे प्यारी थी। उसे कृष्ण क्यों ले गया?" तो उन्होंने मुझे समझाया कि अब वो वापस नहीं आएगी...

जब मैं उसी स्थान पर गया जहाँ मैं दोस्त से अंतिम बार मिला था तो उस स्थान पर छोटे-छोटे गुड़ के टुकड़े पड़े थे। मैं चुपचाप घर आ गया। और मैंने दो रात बिना सोए हाथ में पाजेब लेकर गुजार दी। जब तीसरी रात मुझे अचानक नींद आ गई तो मुझे वही पाजेब की आवाज मधुर सुनाई देने लगीं।

जब मैंने अचानक अपनी आँखें खोली तो आँखों के सामने केवल और केवल अंधेरा पाया।

अदना सा पाश्चात्य

आशुतोष चौबे
परास्नातक हिंदी, पूर्वार्द्ध

कितना भी अच्छा करने की कोशिश करो जीवन के सभी पहलुओं में कुछ न कुछ कमीं रह ही जाती है। कितना कम प्रयास करते हैं हम खुद को ढूँढने में और कितना ज्यादा समय देते हैं बर्बाद करने में। ढूँढना सुधार करने का पर्याय समझ आता है और मनुष्य है कि कितना कम सुधार कर पाता है। मनुष्य का इस तरह से व्यवहार करना और लरजना उन्नति और अवनति के बीच की मेंड़ होती है, जिसको बांधने का काम पूर्वज करते आये थे। जीवन जीवंत और त्रुटिपूर्ण तभी बन सकता है जब व्यक्तित्व में स्वयं के सर्वांगीण आंकलन की क्षमता आ जाये। ऐसा तभी हो सकता है जब मनुष्य चलना सीख ले। चिकने तल पर चलना हमेशा जोखिम भरा होता है, ऊपर से स्नेहक लगा तल तो दुर्घटना का मानदण्ड माना जाता है। मनुष्य जीवन के तल ओर चलता है और गलती करके दुर्घटना का शिकार बनता है। बात एक दुर्घटना तक नही थमती बल्कि यह प्रक्रिया रोज होती है और अनवरत जारी रहती है। इसी के कारणवश लोग कष्ट भोगते हैं और असहनीय जीवन जीने को बाध्य होते हैं। हमे अपने लिए कुछ अनुशासन बनाने और उनको लागू करने का कार्य करना चाहिए। इसके लिए एक

अलग तरह की बौद्धिकता की जरूरत है चाहे वह जिस भी क्षेत्र में हो। मनुष्य को जीवन एक फर्श की तरह नहीं बल्कि एक खेत की तरह बनाना चाहिए जो गिराने की बजाय एक सुंदर उपज का पर्याय बने।

मैं चाहता हूँ कुछ ऐसा हो जो आपको रास आये लेकिन मेरे चाहने से क्या होगा और फिर होगा तो आपके चाहने से भी नहीं। मैं करना चाहता हूँ आप लोगों के साथ थेल्स से लेकर परमेनीडीज, हिरेक्लीटस और एम्पीडोक्लीज के सिद्धान्तों पर चर्चा तर्कपूर्ण चर्चा। प्लेटो के कुछ पूर्व सुकरात तक सीमित ठहरना एक बेहद मंझी हुई बेवकूफी है। मैंने एक दृश्य में सुकरात को मरते हुए महसूस किया और दूसरे दृश्य में सारे एथेंस को। सभी तथ्य गतिमान हैं बिल्कुल थोर के हथोड़े की तरह जो कहीं भी बिजली और पानी पैदा कर सकता है और लोगों के बीच खुशी बांट सकता है लेकिन इसको सिर्फ और सिर्फ एक मिथक ही करार दिया जाएगा। सभी तर्क एक उस तरह के वहम का भंडार होते हैं जिसके बारे में किसी को कुछ मालूम नही होता है और लोगों के द्वारा वो सत्य स्वीकार किये जा चुके होते हैं। मैने कभी भी भंडारण का विरोध नहीं किया। बल्कि एक सीमित भण्डारण मुश्किल समय मे सुखद होता है।

जीवन अमीटर की तरह अपनी विद्युत रूपी तेज गतियों को मापने की कोशिश करता है। लेकिन जैसे एक तेज विद्युत धारा आएगी और जीवन के बल्ब रूपी एक पहलू को नष्ट कर जाएगी और हम उस बल्ब में टुकड़ों को समेटने के इतर लग जायेंगे विद्युत धारा की तीव्रता मापने में। जब कुछ न आ पड़ेगा तो हम कोई उपाय निकालने की कोशिश करेंगे और जोड़ देंगे एक संधारित्र क्षमता को घटाने व बढ़ाने के लिए। लेकिन जीवन का क्या कितने ही संधारित्र जोड़े जाएँ, कितने ही तड़ित चालक लगाए जाएँ जब तीव्रता आएगी तो सब कुछ नष्ट कर जाएगी और तब रह जायेगा सिर्फ पानी जो हो चुका होगा जहरीला। अब हम किसकी बात को माने जो यह कहते हैं कि 'पानी और सिर्फ शुद्ध पानी के सिवाय कुछ नहीं बचता है', थेल्स को जो कहते हैं कि 'दुनिया की समस्त चीजें पानी की बनी हैं चाहे वह तितली हो पहाड़ हो या फिर धातु' या फिर हम एनाकसीमेनीज की बातों को तवज्जो दें जो कहते हैं कि 'अंत मे सिर्फ भाप या गैस रह जाती है और सभी वस्तुएं हवा से बनती हैं' या फिर एमपीडोकलीज की तरह कोई अपना अन्य समन्वय का रास्ता निकालें। लेकिन आजकल पिता जी को अक्सर यही कहते सुनता हूँ कि समन्वय बहुत बुरी है। मैं किसी चीज का आदी नहीं हूँ। मुझे कोई स्वर्ण मृग नहीं चाहिए और न ही मैं किसी लाभ को घाटे में बदलता हूँ। लेकिन फिर भी कुछ तो अद्भुत होता है जो कि एनेक्सागोरस ने पहचाना और उसने लोगों को सच्चाई बतायी तो लोगों ने उसके लिए मौत चुनी।

एथेंस का यह दुर्भाग्य रहा है अच्छे लोगों को नास्तिक बनाकर उन्हें मौत देना। यदि एनेक्सागोरस मानता था कि हम सभी को प्रेम जोड़े रखता है या हम सभी जिस सूर्य को देखते हैं वह महज एक आग का गोला है तो क्या गलत था। दुनिया सच को खोटी हुई आगे बढ़ रही है। आंखों देखी लोग कम पसंद करते हैं। मैं भी देखना कम ही पसंद करता हूँ, मुझे कल्पना करना उससे ज्यादा प्रिय है। मनुष्य को दूरदर्शी और सूक्ष्मदर्शी दोनों होना चाहिए। विभिन्न पहलुओं पर सोचने से पहले उसे देखना चाहिए कि उस पर सोचना सार्थक है या नहीं। साध्य और साधक में यही गूढ़ अंतर रहता है। साधक समर्थ और सार्थक दोनों होता है।

किसी महानतम रहस्य की खोज करने वाले महान नहीं होते बल्कि महान होते हैं वे रहस्य जो खोजे जाते हैं और उन्ही के प्रभाव से वह खोजने वाले भी महानता को प्राप्त करते हैं। इसका सम्पूर्ण कारण नियति होती है। जजो बातें सामने आती हैं वह कुछ कम होती हैं और जो बातें अंदर रह जाती हैं वह ही सम्पूर्णता में व्याप्त हैं। मनुष्य मरने के बाद जीवित होता है। मैं कहीं भी किसी भी जगह एक भी ऐसा अध्याय नहीं लिखना चाहता जो समन्वय में बंधा हो और जिसकी जड़ मजबूती से टूट जाने की ओर अग्रसर हो। मेरे लिए टूटने की परिभाषा बिल्कुल अलग है भरोसे की तरह। एक एथेंस ऐसा भी देखता हूँ मैं जहां सुकरात और एनेक्सागोरस को बेवजह ही मार दिया जाता और एक एथेंस ऐसा देखता हूँ जहाँ आज भी सुकरात और एनेक्सागोरस धूमधाम से खेती कर रहे हैं और अपनी फसल बेंच कर खूब धनवान हैं,उन्हें किसी की कोई जरूत्त नहीं है। मैं बात परिवर्तन की करूँ तो भी यह कहाँ तक सही है मुझे ज्ञात नहीं कि जीवंतता एक लग्जरी अनुभूति है जैसा जादुई स्वप्न में होता है। मैं कभी भी जादू को सत्य नहीं मानता और न ही कभी दिखाने की स्थिति में आ सकता क्योंकि मेरे अंदर का औरा इस स्थिति के लिए नहीं है। स्थितियों को पहचानना मनुष्य कर वश की ही बात है। मैं तरह कदम उत्तर चलता हूँ और फिर दक्षिण में बीस कदम फिर पश्चिम में और फिर पूर्व में 40 कदम तो तय की गई दूरी और विस्थापन क्या होगा, इससे मुझे क्या ही मतलब। मैं तो सिर्फ तय चलूँगा वह चाहे दूरी बने या विस्थापन। मनुष्य अंतरंग होता हुआ अपने अस्तित्व के चरम पर पहुँचने को व्याकुल दिखाई दे रहा है।

एक दिन मैं चला जाऊँगा

आदित्य सिंह
बी. ए. संस्कृत (विशेष), तृतीय वर्ष

एक दिन मैं चला जाऊँगा यकीनन मर जाऊँगा,
तुम ढूंढोगे मुझको और मै कहीं खो जाऊँगा।

हमेशा फिर मेरी यादे तुमको सताएगी,
जीते जी मैं याद न आया मर कर आऊँगा।

तुम मुझको सोचोगे और सोचते जाओगे,
मैं ये सब कहीं दूर से महसूस कर पाऊँगा।

जब-जब तुम आईने में खुद को देखोगे,
क़तरा क़तरा आँसू बनकर चेहरे पर छा जाऊंगा।

जब रातों को सोये होगें ख्याबों में आऊंगा,
अचानक उठकर रोओगे मैं आँखो से ओझल हो जाऊंगा।
एक दिन मैं चला जाऊँगा यक़ीनन मर जाऊंगा।।

ग़ज़ल

राहुल मौर्य
बी. ए. हिन्दी (विशेष), द्वितीय वर्ष

(1)

तर्ज़ पे रफ्तार के तुम भी संभलना सीख लो,
या कि दहको नभ पे चढ़कर, या कि जलना सीख लो।

हर घड़ी बस धूप का साया न होगा राह में,
ए मुसाफिर अब अंधेरों में निकलना सीख लो।

ग़र जो लहरों से उलझने का इरादा है मियां,
छोड़ दो फिर कश्तियां पानी पे चलना सीख लो।

तुम चमकना चाहते हो ख़ल्क में बेदाग तो,
वक्त की तासीर समझो और ढलना सीख लो।

रौशनी- ओ -जिंदगी में एक ज़ामा तय करो,
मोम को पत्थर करो या की पिघलना सीख लो।

कशमकश-ए-ज़ीस्त 'राहुल' वक्त रहते हाल को,
कुछ बदल उसने दिया कुछ तुम बदलना सीख लो।

(2)

दिल रहा बेचैन शब भर सोच कर अगली सुबह,
फिर मिले कुछ काम अच्छा क्या खबर अगली सुबह।

क्या संजोना कुछ भला अब मंजिलों के वास्ते,
क्या पता ये खत्म हो जाए सफ़र अगली सुबह।

आज बंजर रेत ने भी तश्नगी से ये कहा,
देखना गुलजार होगा यह शहर अगली सुबह।

आज की है रात बस, तुम हर सितम तारी करो,
हम नहीं दिल्ली कि फिर होंगे बसर अगली सुबह।

हाथ में ले रोटियां वो सोचते 'राहुल' यही,
क्या ख़ुदा ने भी लिखी अपनी सहर अगली सुबह|

भावना, ज्ञान और कर्म जब एक
सम पर मिलते हैं तभी युग प्रवर्तक
साहित्यकार प्राप्त होता है।
~ महादेवी वर्मा

कृतिका
बी. ए. हिंदी (विशेष), प्रथम वर्ष

बादल शर्मा
बी. ए. हिंदी
(विशेष) प्रथम वर्ष

भूमिका चौधरी
बी. ए. हिंदी (विशेष)
प्रथम वर्ष

बादल शर्मा
बी. ए. हिंदी (विशेष)
प्रथम वर्ष

कृतिका
बी.ए. हिंदी (विशेष), प्रथम वर्ष

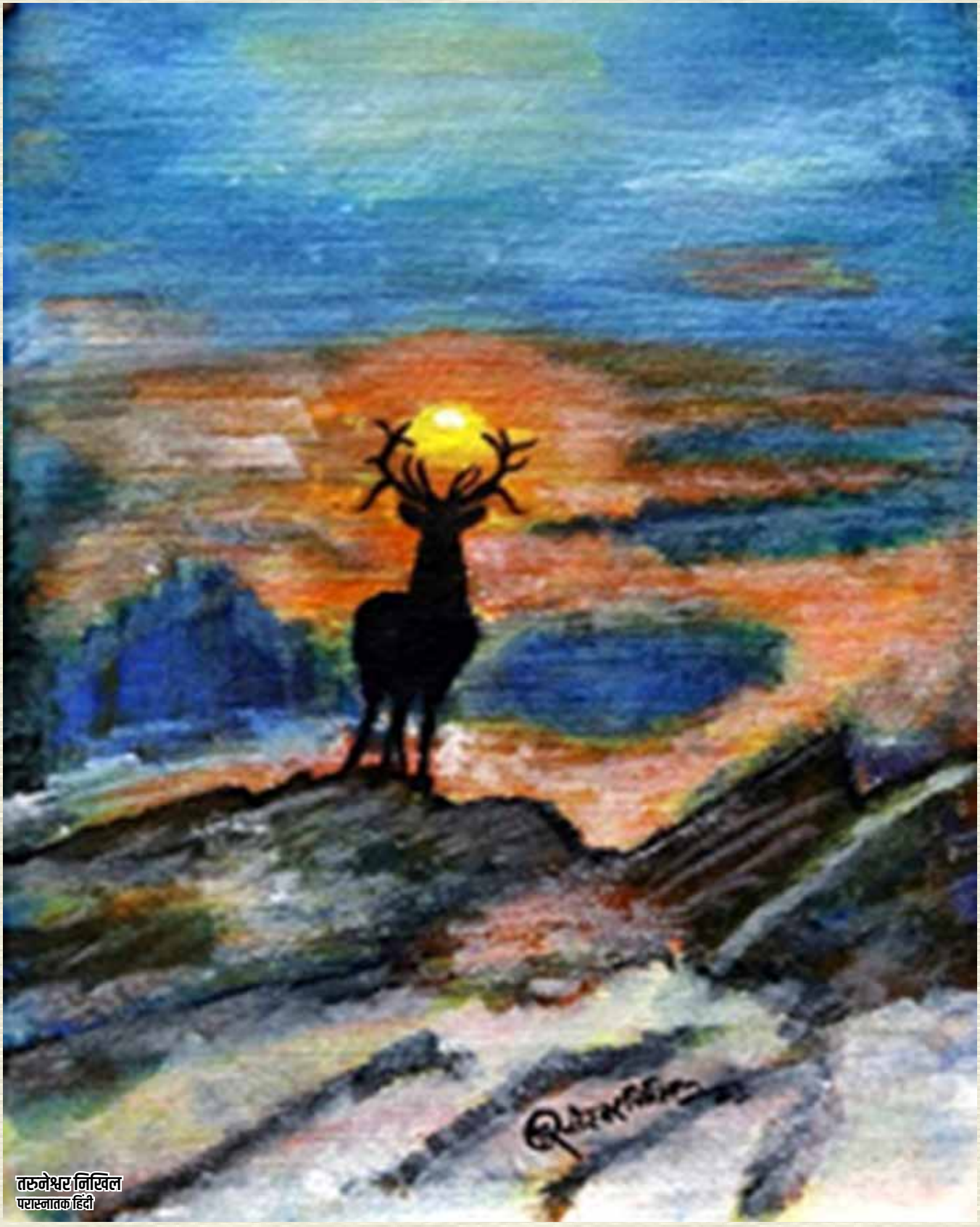

तरुनेश्वर निखिल
परास्नातक हिंदी

ENGLISH SECTION

Editorial Board

Ms. Ruchi Sharma
Dr. Uplabdhi Sangwan

Student Editors

Ananya Gaur
Nilesh Goswami
Sharbani Garg
Aditi Gupta
Yash Baliyan
Archana Walia
Sanjivanie Bhalla

INDEX

1. Trans community: After the repeal of section 377 ---------- 33
2. Pressure of competitive exams ---------- 34
3. India of my Dream – Vision@2047 ---------- 35
4. The kindred chronicles of the pandemic and the smartphone dystopia ---------- 36
5. Time and tide wait for none ---------- 37
6. Sayonara Twenty Twenty-one ---------- 37
7. Who is the master? – You, me or...? ---------- 38
8. I am a girl ---------- 39
9. Success & failure ---------- 39
10. Adieu! ---------- 39
11. Loss & it's inevitability ---------- 39
12. How to become a successful young leader? ---------- 40
13. February: Warm and Cold ---------- 42
14. Finding Answers ---------- 43
15. A love letter to winters ---------- 44
16. Delhi Aromas ---------- 45
17. The Walks with My Father ---------- 45
18. Rich or Poor ---------- 45
19. Standing life deep in regret ---------- 46
20. Apotheosis ---------- 46
21. An Incomplete Verse ---------- 47
22. Would you accompany? ---------- 47

TRANS COMMUNITY: AFTER THE REPEAL OF SECTION 377

ASTITVA SINGH
B. A. (H) ENGLISH, Second Year

On 6th September 2018, the Government of India removed Section 377 from the Indian Constitution. This step was indeed iconic. Since time immemorial, the community of "third gender" has been disregarded as they did not meet societal expectations of normal human beings. Tagging various names like "Hijra", "Kinnar", "Aravani", "Aruvani", and "Jogappa" reduce their identity even more. While we cannot always question the government for not helping the transgender community, the larger problem is the stereotypical thinking that persists in India since ancient times. People consider the presence of transgender people amidst them a bad omen and are reluctant to integrate them within the larger social community and prefer to restrict their entry into educational institutions, hospitals, and even public gardens. They are reduced to begging as the sole mode of survival. The relatively modern stigmatization of transgender people runs contrary to the ancient practices such as seeking the blessings of such people at the time of childbirth and the conduct of other auspicious ceremonies. In ancient texts, the references to trans people and their equation with divine beings or "demi-gods" might indicate their distinctly higher social status in ancient India. But the British government influenced and changed these practices by imposing a new law in 1860 in British India that amounted to criminalization of homosexuality. Anjali Rimi observes that "British intervention in Indian law has degraded the trans community, reducing them to a situation of uncertainty."

Recent decriminalization of Section 377 by the Indian Government has indeed opened doors to many opportunities for trans people and thus enhancing social opportunities available to them.

But decriminalization of the community is not sufficient as the LGBTQ+ Community is still deprived of basic facilities. Even though same-sex relationships are legal, the law does not allow for or recognize the marriages of people in such relationships. Further, adoption of children is not allowed for same-sex couples because apparently they "cannot provide the kind of affection cis-het parents putatively can in their roles as father and mother". People at large are still not comfortable in allowing the trans people to interact with non-trans people due to the prevalent prejudices against the former. The reading of trans people as a "curse" on society ostracizes them further and they are deemed to be apparently unfit for society.

The increasing number of suicide cases among the trans community is also a matter of serious concern. Proper psychological rehabilitation is required for people who have attempted suicide. The educational curriculum should include literature, history, and biological studies on the LGBTQ+ community as it can sensitize people to the gender minorities and reduce the hold of mainstream stereotypes. Movies and advertisements should consistently show Trans people in a positive light. As Indians, we need to support and amplify trans voices in the struggle for de-stigmatization of their mere existence.

PRESSURE OF COMPETITIVE EXAMS

RIDDHI
B. A. (HONS), SANSKRIT

Stress is a serious problem that bothers most people in the world today. The World Health Organization defines mental health as the state of well-being when one can cope with stress and realize their potential in order to work fruitfully. Due to liberalization and the entry of the global market, the education sector in India has become service-oriented in the hands of private players. This has resulted in an increased competition which takes a toll on the mental health of the students.

In recent years, there has been an increasing number of suicides and instances of depression among Indian students. The competition to secure a seat in a reputed educational institution and the inadequate number of jobs has often been diagnosed as a possible cause of this distressing trend. The pressure put upon the students by their families and educational institutes to perform consistently is another reason which causes physiological and psychological stress on them.

India is the world's second-most populous country with a relatively young population. Thus, as a result of the increase in population, the number of students appearing in the competitive exams are gradually increasing. But the number of seats is not increasing at the same rate.

For example, 19,500 students wrote the first all India engineering entrance exam held in 1961. The number went up to 299,807 in 2006. In 2020 11,18,673 students wrote the exam. Though new colleges have been established, their number has proven to be insufficient to meet with the growing number of students. Also, the number of seats in elite institutes like the IITs have not increased proportionately to the number of applicants.

The situation is similar in other fields also. National Eligibility cum Entrance Test (Undergraduate) or NEET was first held in 2013 for admission in the field of medicine. In 2016 under the orders issued by the Honorable Supreme Court of India, NEET became the only medical entrance exam in India. In 2013, 7,17,127 people registered for the exam. In 2020, the number has nearly doubled up to 15,97,435. With the increase in the number of students, the standard of the exams is also increasing in order to screen out "unworthy" students. In order to select eligible candidates from a large number of aspirants, the question paper have become tougher with time. It is not possible to evaluate subjective answers of such a large number of students because of logistical problems. So, problem-based objective questions are set for such exams. In order to acquire the requisite skills to solve such problems, aspirants are forced to take additional coaching. This becomes unfair to students who cannot afford such coaching. Students cannot display their conceptual knowledge or talent in such exams as they are more dependent on rote learning abilities.

The coaching centres for college entrance exams have sprung up in all corners of India. Most parents in India believe that their children will have a better chance of succeeding if they attend

these institutes. Often the high tuition fees of these institutes are not affordable for the economically lower middle class and lower-class students. They have to take loans and arrange the amount from other sources. But the coaching institutes generally do not have any refund or exit policy. So, the parents pressurize students to carry on studying in these institutes. Students who cannot cope with the academic burden often develop a feeling of guilt and think they are letting their parents down. A solution is needed to cope with this problem. Teachers can educate their students about the importance of time management- that can considerably reduce stress on the students. Teachers and parents should acknowledge the effort of every student instead of discouraging them, even when the students doesn't meet discrete 'targets'.

In light of the points highlighted above, it can be said that academic pressure is a serious problem affecting students. Ever increasing competition and performance pressure is turning Indian students into highly stressed-out young adults. This is truer of those appearing for competitive exams. The situation is getting out of hand and we must make a collective effort to alleviate the stress on the students.

Forbid us something , and that thing we desire ; but press it on us hard and we will flee.
– Geoffrey Chaucer

INDIA OF MY DREAM – VISION@2047

PRATYUSH RAJ
B. A. PROGRAMME (SANSKRIT AND PHILOSOPHY)

India is not just a country, it's an idea of great emotional appeal to more than 135 crores of Indians. It's a nation of visions and dreams. Every citizen of our nation is committed towards the development of our country. We got our independence in 1947 and by 2047 we'll celebrate our 100th year of Independence. For this epic moment, I want to express my vision for India in 2047.

As we have a great youth workforce in our nation, we can work together and fill all the loopholes which made our country lag behind the developed nations. We do have to make our nation a place where women hold the same rights and dignity as men. A place where our beloved sisters and mothers can live fearlessly and occupy the public spaces, irrespective of the time of the day. The dowry system must be banned in our country as it leads to many crimes and harassment against women. There should be no discrimination on the basis of religion, caste religious identity, economic status, gender, color, etc.

Also, Indian politics must also be updated and there should be transparency between the Government and the Public. India should be developed enough by 2047 so that it would stay self-sufficient in areas like food, technology, weapons, petroleum, jobs, etc. My Vision for India @ 2047, is to see India as an advanced and developed nation that could govern the world like a super-powered nation. JAI HIND.

THE KINDRED CHRONICLES OF THE PANDEMIC AND SMARTPHONE DYSTOPIA

AAKRITI SANGHI
B. A. (Economics & Commerce), Second Year

At a time when the dangerously nimble-witted pathogen is still fluttering over world economies, there couldn't have been a better opportunity for our smartphones to prove their mettle as the ultimate wonderland. From banking and finance to classrooms and study resources being a click away, the glossy little rectangles have perhaps played a significant role in not rendering the gone-by academic year(s) a zero year, no matter the resultant learning outcomes. Moreover, if it weren't for the common WhatsApp or Telegram group — the family having all its members marooned, drawing breath in separate rooms, would endure great agony from mandatory abandonment.

However, like every coin has two sides, such advancement of technology is a double-edged sword too. There's no denying that just as the SARS-CoV-2 has been mutating and trapping more and more people in its fatal clutches, our Androids and iPhones have also been upgrading and quite unknowingly forcing us to swim deep in the 'wave' of the gimmicks offered by them.

Our unattended obsession of running our fingertips over screens and being fettered by the comfort and instant gratification brought in by the repetitive act of typically touching, swiping, and tapping our phones 2,617 times a day is quite similar to the underlying stirring up of OCD of washing hands or using sanitizers ever so often by virtue of following the hygiene-appropriate regime.

While the passing away of many illustrious personalities due to the virus has indubitably included a loss of many intellectual heavy-weights-leading to a veritable 'brain drain' to the heavens; the mere presence of our smartphones is causing a literal 'brain drain' to our in-stock cognitive capacities. With attention and rupee being the ultimate currencies, the 'attention economy' is witnessing a rise in numbers of those victimized by an 'internet' shaped around the demands of advertisers. On the contrary, the 'rupee' economy lately facing inflation and other concrete socio-economic issues has its people trapped in a balloon who keenly await to get their hands on a skewer.

Frequently used to symbolize danger, among other things, and being culturally the symbol of extremes, the colour red is presently being used most to signify covid caseload in different places on the world map. While on the flip side, it is no longer daunting to witness red-coloured dots and icons over dozens of applications that trigger us to tap them and get ourselves 'captured' candid on the red carpet upon entering the unfettered world. With people all around us trying to get back to the old normal, fighting with the new one and alongside habitually using the downward-pull action or pull-to-refresh buttons to view something new on their social media feeds every next second, the pandemic has successfully brought to the rim the dichotomy of human actions, desires, and his paradoxical nature. Undeniably, life in itself poses a trade-off in all our decisions and choices, but what worth is the scarce commodity like the time that is spent being tethered to man-made 'masters'? With attention being the new currency and a finite one, why aren't we expending it elsewhere?

At a time when microbes are getting smarter, gadgets becoming sleeker and sharper, humans have definitely lost control over their mind's wanderings, which has its strings pulled tightly by the 'tech-savvy gaffer'. How wonderful it would be if we too could execute a mechanism just like various social media platforms' algorithms and perhaps could know better about our own wants, desires, and dislikes than an inanimate device!

Time and Tide Wait for None Time! Time! Time!

AAKRITI SANGHI
B. A. (Economics & Commerce), Second Year

A realization of its dearth is what makes us hang in there and persevere. Since times immemorial we have been preached to about how time flies and that beating the clock is the only way to achieve success in different domains of our lives. The arguments goes that being speedy and consistent in life is the cornerstone to being alive and kicking. Just like time, the tide does not look out for anyone. Irrespective of where we are, how we are, what we are doing, witnessing ups and downs just like the rhythmic movement of tide remains a constant endeavor in our lives. Being a scarce commodity, time ought to be used meticulously. We can earn the money we might have spent callously, but we can never buy back the time we lose, thus making time even more valuable than money. The statues of the greatest of rulers which were erected to symbolize grandeur and glory have also been claimed by the stroke of time. Kings and princes come and go, but time is perdurable. In today's context, this age-old golden adage by Geoffrey Chaucer holds true more than at any other time of human history. It goes without saying that the SARS-CoV-2 virus that was indefinitely unlooked for and has brought in a series of changes in our lives. We all keenly awaited the new normal, anticipating the times when we would be able to move out and breathe in freely, sans fear and apprehension. Yet the harsh reality is that nobody knew when all this pain and suffering inflicted on us would recede. Thus, what we ought to do most during unprecedented times like these is what the time and tide do — just moving on because life has to go on. We can't wait for the time when everything gets all right.

The best moment for action is now!

SAYONARA TWENTY TWENTY-ONE

AAKRITI SANGHI
B. A. (Economics & Commerce), Second Year

Hey Twenty Twenty-Two!
Shoot the bullets of joy and exuberance from your spray roscoe.
Let the blank canvas be a wall of graffiti,
Dominated with dabs of brightest colours like a shower of confetti.
Have our faces devoid of masks,
So together all can dive into the pool of favourite tasks.
Get the concept away of 'new normalcy',
For we arduously desire to remain as before, silly and messy.
Allow temples of knowledge to have back vibrations of giggles and fights,
And let the diffusing aroma from canteen induce our appetite to reach greater heights.
Bored of virtual meetings,
Now get us to exchange in-person greetings.
There's enough dearth of hugs and handshakes,
Make sure to save us from further heartaches.
Twenty Twenty-One was a dark tunnel,
May you help us minimize our struggle.
You've refracted as a streak of light,
Welcoming you brims our hearts with new-found delight.
You are a beacon of hope,
Awaiting you to magically ununfold.

WHO IS THE MASTER? — YOU, ME OR...?

AAKRITI SANGHI
B. A. (Economics & Commerce), Second Year

Hey Humans,
It's your battery charging device here!
Howdy-doody?
Are you still busy serving your mind's
Wandering hunger and thirst
Day and night of which
You have certainly lost control?
How does it feel to be the slave of the master
You yourself invented
With all your head and might?
I will let you answer that
By yourself in your head
Having its strings pulled tightly
By the "tech-savvy gaffer".
Well, the internet is not as much
Exploited as I'm by all the intelligent animals out there.
You are the minion of the master
You gave birth to,
But I'm the one
Who acts as a diving board
to let you dive again into the abyss of enslavement.
You reach your place of servitude,
And I'm left abandoned and used.
But the feeling of being given the big elbow
By all of my lovely deserters
Is short-lived,
For all of you come back desperately
Looking for me to give back "life and fuel"
To your apparent "body parts".
Here, I absolutely fall in love
With the homo sapiens
Because of their sensitivity
As they try to adjust themselves
According to the length of my cord and two pins
Right at my back.
They correct their posture
Time and again to ensure
That there is no lacuna in serving their "lords".
I feel warm and loved,
But as time passes
I realize how highly mistaken I was
To assume humans possess
Some consideration.
I'm plugged into the electricity socket
Overnight because humans have to charge their own batteries
To supply such un-interrupted bondage the next day
That they forget to give me a hiatus.
Watching them simply hit their sack
Propels me to cause an "internal injury"
To their bodily organs,
But I then wonder
What difference will there be between them and me?
Despite continuous pop-ups
That their "body part" is 100% alive,
They lay indifferently in the land of Nod.
I become excruciatingly heated
But this is the price sadly I pay
every day
For believing humans have a tad bit of sensitivity buried deep inside them.
And again, I'm left abandoned
To let these intelligent underlings
Be held by the fetters of
Their man-made master.

I AM A GIRL

AAKRITI SANGHI
B. A. (Economics & Commerce), Second Year

I am a girl,
Anguished as I walk in the dark,
Marginalized as I breathe,
Afraid as I break a patriarchal norm,
Gloomy as I am objectified.
Isolated from the 'fun' that boys do,
Repulsed now to smash the glass ceiling,
I am ready to fall in
Love with my dreams — not the word 'settle'.

SUCCESS & FAILURE

AAKRITI SANGHI
B. A. (Economics & Commerce), Second Year

Success Failure
Is Is
Sweet, Bitter,
High, Low,
A peak. A valley.
It makes you lousy. It makes you humble.
You climb You fall
With no shortcuts. While forgoing long cuts.
Red, yellow, pink! Grey, blue, black!
You experience a rainbow You miss the moon
By collecting every blob. While counting the stars.
Afraid of losing, Afraid of giving up,
Hardly preserving to embrace success, Relentlessly avoiding failure,
It can't be realized without failure. It always precedes success

ADIEU!

AAKRITI SANGHI
B. A. (Economics & Commerce), Second Year

Mask
Suffocative, colorful
Wearing, protecting, sweating
Time to bid them goodbye. Really?

LOSS & ITS INEVITABILITY

AAKRITI SANGHI
B. A. (Economics & Commerce), Second Year

Loss is autumn orange,
It sounds like fading away of the sweet noise you love.
It tastes like a plate of stale meal.
It smells musty like a book that pulls through foxing.
Loss, at last, feels like a bare winter tree amongst the colors of spring.

It must cost you something, otherwise it's not worth doing.

–Sir Ian McKellen

HOW TO BECOME A SUCCESSFUL YOUNG LEADER?

ANURAG SINGH
B.Sc. (H), Chemistry

Well, being a good leader is all up to you. Having good leadership qualities is the first and foremost thing that a leader should possess.

The world needs young leaders to comprehend the present world, the prerequisites, to put forward new development ideas, and many more.

Now, how will you describe a good leader? In a study, leadership qualities like adaptability, intelligence, assertiveness, and conscientiousness were cited as most important.

To become a good leader, a person should be passionate, energetic, enthusiastic, inspiring, and positive-minded. He should be able to acknowledge and appreciate the works of his followers, co-workers, and his team. So what can we do to inculcate this appraisable leadership quality to become effective and successful young leaders?

Well, you can look up the following ways of becoming a good leader and think about how could you implement these strategies in your daily life.

KNOW YOURSELF

The first thing is to understand what type of a leader you are at present. What are your strengths? What are your weaknesses? Once you have identified these aspects, try to think whether these characteristics are of help to you or hinder you in being an effective leader. Know yourself and mark out areas that need to be improved.

ENCOURAGE YOUR FOLLOWERS.

A good leader always encourages his followers to express their creativity. A successful leader always offers new challenges with ample support to bring out the creativity of his followers.

One way to incubate creativity is to offer challenges to the team members such that they stretch their limits but never become discouraged by the walls to success. Their success will make you a good leader in their eye.

BE PASSIONATE

Being passionate is of utmost importance for a good leader. You can develop this quality by thinking of different ways to express your zeal and enthusiasm. You should be able to make people know that you care about their progress. When someone posits his ideas to other members of the group, be sure to tell them how much you liked his idea and contribution.

"A great leader's courage to fulfill his vision comes from passion, not position" – (John C. Maxwell).

HAVE CHARISMATIC COMMUNICATION SKILLS

To be a successful leader one should possess charismatic communication skills. He should be able to focus on one-on-one communication with his followers. A leader should be able to communicate the vision and goals to his team to motivate them to achieve them efficiently. He should be able to

communicate in such a way so that he could make his followers see what he is expecting to achieve.

"The art of communication is the language of leadership" – (James Humes)

POSITIVE ATTITUDE

A team leader should always possess a good positive attitude. If you have a poor attitude, how can you expect the team members to be positive? Well, to overcome this problem a leader should always have a positive attitude which not only fuels the leader but also encourages the team to keep pressing on until they succeed

"Virtually nothing can stop a person with a positive attitude who has his goal clearly in sight" –(Denis Waitley).

OFFER REWARDS AND RECOGNITION.

One of the most important qualities of a successful leader involves knowing that by offering rewards and recognition to the teammates, a leader can help the followers feel appreciated and happy. And there is no doubt that a happy mind does better work.

ALWAYS KEEP TRYING NEW IDEAS.

A good leader should actively solicit creative suggestions. How often have you heard the phrase 'that's not the way to do it here? To be a successful leader, one should always look up to new ideas that can be implemented to inspire, and motivate the group members. The role of a good leader is not to have all the ideas but to create a field, a space where his team members could put forth new ideas that can be valued and implemented.

A leader who possesses the above-mentioned qualities will become a successful leader. Today world is becoming more competitive in every sector. And to achieve success in today's world young leaders should demonstrate good leadership qualities so as to motivate and inspire people to develop to their best potential. Young minds can bring up better techniques for development.

Thus, helping young people develop leadership competencies makes them better able to solve community problems and enhances their civic participation (O'Brien and Kohlmeier,2003).

"A good leader is not a searcher for consensus, but a molder of consensus" – (Martin Luther King Jr.).

Without commitment you'll never start , but without consistency you'll never finish.
Ease is a greater threat to progress than hardship.
--Denzel Washington

FEBRUARY: WARM AND COLD

SUJAL SARAWAGI
B. Com. (H), Second Year

Challo Dilli.!

After writing the board exams back in 2020, "Dilli dur nahi hai", seemed like a very relatable phrase. The result, surely, was another checkpoint towards the finish line in this race of manifesting the DU life. After tackling the hurdles viz. the first three cutoffs, your lad made it!

My batchmates and I, however, sat in our comfort zones in front of 13-inch screens, muting and unmuting ourselves just for the sake of saying the word 'Present'. Away from the hassles of traveling in the metro, looking for e-rickshaws, gossiping over tea at Sudama's and whatnot, there we were, navigating through MS Teams, looking for internet network at different spots in the house, gulping down our helplessness with a cuppa.

After a year of gnawing at every possible reason to visit the campus once, just once, here I am, writing the beginning of my journey on Indigo flight number 6E 646, from Surat to Delhi.

Pushing the Gates Open

Throughout the journey to North Campus, I felt a little uneasy. It was partly due to the hangover from the previous night's party but mainly because of the jitters of walking through the college gate for the first time. The rickshaw we took from Vishwavidyalaya was like a chariot and we, Arjuns, were getting pieces of advice and knowledge from our Saarthi, Krishna, the chauffeur.

Students pacing to and fro, protesting mobs, graffiti artwork, thrift shops, and food joints on the way to Hansraj College nudged my inner Kissago/ story-baaz, manifesting scenarios of what a normal version of college life would have looked like.

The guard at the main gate gave us a suspicious look for not carrying IDs but eventually smiled and said, "Aap he ka college hai, bas sabse pehle admin office jaake ID issue karwa lo"

To my right, flowers in the lush green lawns were dazzling in the breezy sunlight; the 20th CE

architecture, the color of the building, its cracks and folds, the establishment stone looked as if they were expecting my arrival, waiting to receive my share of love, to see my pupils dilate as I appreciated the tantalizing beauty of its heritage.

One of the reasons that I've always been a fan of the stories of the University of Delhi is the welcoming nature of its components. The staff, food stalls, rickshaws, flowers and trees, and most importantly the dogs in DU Colleges, they were right there; or were they?

Flash, the guardian of HRC, lurking around the Lover's Point came and sat next to me; shaking his paw and petting him was probably a mandate in return for his very warm 'Khushamadeed'

After spending a good 62 minutes in the corridors, feeling the rough patches on the benches, bathing in the sun with the November wind brushing past my hair, tasting the chai that would be the most pious companion in the near future, I took along a distinguished experience of a lifetime: walking through the college gate for the first time.

FINDING ANSWERS

VANSHIKA KALIA
B. A. (H) English, First Year

That girl was sitting in front of the fire. The atmosphere was very cold and she tried to clutch her shawl closer to keep herself warm. Thousands of pictures were flashing in her mind. She thought of how she once saw the fire in a Yajna in her childhood and while imitating her parents, had burnt her finger. Her elder brother was so worried that he shouted for help and then sprung up to fetch Burnol only to apply it to her fingers. She recalled herself crying and the pain and how quickly it went away, leaving her to be the same agile one.

Then she recalled her Masi's marriage and how her beautiful Masi and her husband revolved around the sacred fire. There were ladies singing songs and dancing to the rhythm of the Dholak. Then she recalled how Masi, before going with her husband forever, turned and lifted her face to reflect her eyes full of tears and how everybody cried with her. Those mesmerizing images kept coming and kept her engaged.

After that, she recalled a day when she went to see the 'Holika Dahan' with her father. Her father was so worried since a lot of people gathered there and out of the fear of losing her amidst the crowd, he held her hand tightly. She wanted to see what was happening but those strangers blocked her view. Suddenly, her father picked her up as a doll, sensing her desire to see the ritual. She saw people pouring water and revolving around a huge pile of wood and cow dung cakes. Then somebody lit the fire and it started burning. Initially, it was all fun but the fire kept growing in size and she could feel the heat on her face and skin. People started withdrawing, and she too was dragged away from the fire by her father. There was rejoice and fun as she was told that the demoness was burnt but she failed to understand.

She was going to Shimla on a school trip with her friends. All of them were having fun and they were singing La..La...Laa.La.Laa, and the bus kept running towards its destination. They reached the hotel and they were served food and they all took a rest. Evening was going to be fun as there was an arrangement of a bonfire. She was looking forward to this event. The sun set behind the mighty himalayas and darkness started pervading. Suddenly the atmosphere became colder and she, along with all her friends dressed in dazzling colourful clothes, gathered. The program started with Antakshari followed by Dumb-Charades and there was also a DJ organised. She had her share of fun. At the end, the students started withdrawing themselves to their hotel rooms, while she sat there looking at the fire. The wood was still red and provided enough warmth. She suddenly started feeling sad. She tried to figure out if it was homesickness or something else but she couldn't. She kept sitting there for almost an hour before the red turned grey completely, but her heart's melancholy state persisted. She wanted answers to her questions then. She still wants them, but life seems to push her to explore more. Those questions drive people in different directions and lead them to travel to unexplored places.

A LOVE LETTER TO WINTERS

SANJIVANIE BHALLA
B. A. (H) English, First Year

One thing about me that shocks everyone is that I am indeed deeply in love with winters. The cold foggy mornings, the silence in the streets, the layers upon layers of clothes, they all make my sad little heart dance with joy. Nostalgia hangs in the air in winters. The fog paints it all with a hue of melancholy. The sky sits there day after day staring down while everyone curses it for hiding the sun in its pocket. The winter sun never shows up when you need her but when she does, it's a celebration. People step out for the first time in weeks even for the slightest glimpse of her face. Her golden rays touched your skin and warmed your frozen heart, as she dazzled cities upon cities of people whining about the cold.

Chai cupped in your hands, the warmth seeping into your skin, reminds you of every sip of chai you have ever tasted. Middays are spent cooped up in your blankets looking at photos you have seen a million times but still keep reaching out for. Hours spent under the covers listening to your favorite music, not a single ray of light seen for days on end because you just refuse to step out of your room. Never making your bed because "Ah well I will be in the rajai in an hour anyway."

However, there's a certain mundanity in winters. Being wrapped up in blankets in the middle of the day digs a hole in your heart, screaming to be filled with your youth. But your youth is messages on WhatsApp and meets on Google. It's yearning for touch and staying up till 3 for no reason. It's taking pictures of little things every day to remind you a week later that you indeed lived this day cause the days keep running into the next and never stays for you to catch up. How odd it seems. You have nothing to do all day and yet so much to do. Your day starts and it ends and you don't know where it went because you wake up late and it's dark at 6. You just keep waiting for the next. Tomorrow will be better. Tomorrow will be better. You keep repeating that but as they say, tomorrow never comes.

Winters own a part of my heart. They feel like taking off a mask. The cold gives you an anonymity; with a cap on my head and a mask (which is a relatively new addition), no one recognizes you when you are out and about. You are free. I will always love winters no matter the amount of seasonal sadness they bring me. At least the cold is upfront about it.

**"Spring passes and one remembers one's innocence.
Summer passes and one remembers one's exuberance.
Autumn passes and one remembers one's reverence.
Winter passes and one remembers one's perseverance."**
- Yoko Ono

DELHI AROMAS

SAANJH
B. A. (H) Anthropology, First Year

The labyrinth of enchanting smells
In the small nooks and corners
The unnoticed performers of spells
Brewing indulgence on their faithful burners.

From the harmonious Tao
Of Saunf Chutney with Teekha Golgappa Pani
To the serenity of gentle foreplay
Between onion garnished Choley and Bhature.

The nostalgic scent of family restaurants of Karol Bagh
The grounding coolness of Shikanji fizz in Sarojini
The crowded stalls of evermore crowded Shahdara
And the replenishing cracks of Kachories in the sweaty shopping aisles of Laxmi Nagar.

Though life breeds in a thousand places
There's nothing like Delhi's food embraces.

Beauty is a short-lived tyranny.
– Socrates

THE WALKS WITH MY FATHER

SAANJH
B. A. (H) Anthropology, First Year

Badminton games between
Busy shop hours,
Reciting farcical tales from youth
Over a fatigue numbing whiskey glass.
Tired, tanned face
Serving the customers,
In the grilling oven
Of hot Indian summers.
The walk along the familiar route
Stirs up images, old, vivid and, mute,
Test anxiety, cow's milk, the soothing grip of his hands
Diffused memories of distant past is all that stands.
Though time has nourished me
With the love of various men,
I still wistfully wait
For the walks with my father again.

RICH OR POOR

AAYUSH SANGWAN
B. A. (H) English, First Year

You see, some flowers are middle-classed.
They are given vibrant, soft leaves
but lack that sweet smell which can
make every butterfly of the garden go crazy.
While some are born elite
like those roses draped in red of royalty
wear a scent which can enchant every
butterfly and bee.
So you see, everything is born poor or rich
and when you talk about beauty, I think
I am below the poverty line.

STANDING LIFE DEEP IN REGRET

AAYUSH SANGWAN
B. A. (H) English, First Year

You're knee-deep in regret tonight
paddling in its dark waters
towards a vague shore, your shirt is
drenched with agony sticking to
your body like grey paint to a wall,
there's a dark cloud above your head
embellishing dews on your eyelashes,
drops fall down your eyes when you blink
and I wonder if you're just wet or crying.

You're waist-deep in regret tonight and
the water is cold, the river bed is made of
jagged rocks of fears slitting your soles,
you move slow and do not pause,
the river eats you like a group of piranhas biting through the meat to the bones, the blood makes everything around you pitch black
that the night above looks like a day.

You're shoulder-deep in regret tonight
the river grabs your feet, tries to pull you inside, you flap your hands like a pigeon tussling between a cat's claws, the weight of emptiness crushing your body, you struggle to escape the grip looking at the shore which always appears a metre farther.

You're neck-deep in regret tonight, the water
floods inside your mouth the way a snake
slithers into a hole. You look at the shore
which is farther than before. You have been walking backwards. You realise. Towards the abyss. You try to run. You kick the water. Try to push it away. As if begging it to leave you alone. You look like the hummingbird that flutters so fast and yet remains at the same place.

You have drowned in regret tonight,
the river becomes a black hole, it siphons
every whit of light and darkness out of you.
As it finally untwines the knot of your being,
peace begins to cease the trembling
from head to toe.

APOTHEOSIS

RAGINI SHARMA
B.A. English (H), First Year

Fly me, break the embrace of cotton,
delicate apotheosis, kissing the sky,
sheer wings flaunt gold hearts,
flutter of feathers, shedding pain,
catch soft scars, dear kids,
story inked onto each as you dip,
into pots, and unto sheets,
most dreaded all life, most beautiful relief,
new skin glimmering, the sun doesn't hurt anymore,
nor do eyes.
aching bed of cacti, probing,
soft blood slithering down,
reddening the green to roses.
Cover me in bubble wrap,
pop it one an hour,
my shield, rip away slowly,
wake me, not with startle,
till I live, let me take solace in sleep,
in the idea of death,
till I meet peace.

AN INCOMPLETE VERSE

ARUSHI SETHI
B. A. (H) English, First Year

The night knocked on my door with clenched fists
Holding incomplete verses from the yesterdays
I peeked outside from a little crack to ask,
"What is it, that you are here again?"

The dark eyes stared back, terribly old in age
The night had lived long enough by now
And see what brought it back today -
"An unfinished story, somehow."

I opened the door, this time again
"Hand me over, I'll finish off", I said
I opened my palm, under its heavy breath
And it placed a timid verse on its edge

Unfinished verses, millions in number by then
Had the night brought back to me
I could not ever find the courage, yet
To complete those stories, unforeseen

And so, right then I placed the verse on my chest
To grieve with its void, to be able to write ahead
Yet alas, I knew I had to send the night away
That night that brings me verses to attend

I silently wrote, at last
And folded back on the old creases, again
I handed it over to the night, knowing
Knowing it'll come back again

The night will knock on my door soon
The moment it'll look at what I had penned
What more could I write ahead?
What more than three dots in the end?

WOULD YOU ACCOMPANY?

PRIYANSHU SHISHODIA
B. A. (H) Philosophy, First Year

An enigmatic eye endeavours your essence
This euphoric enigma enlightens my crescent
Maybe those bright colours could camouflage
My big smile swinging at the "Taj"

Taj is not towering anymore
I found you more appealing
Maybe those marvellous marble could magnify
My big blush above the sky

Let's plan a vacation, to nowhere and every place
Would you accompany, in love and solace...?

How beautiful everything looks there
My crescent moon, the stars entwined
How magical everything looks here
My girl, her hair and peace defined.

If you want to be a writer... search within. Consider the contents of your own soul , your humanity . And if you're honest with yourself , All is true.

बादल शर्मा
बी.ए . हिंदी (विशेष) प्रथम वर्ष

संस्कृत खंड

संपादक:

अवनीशकुमार:

छात्रसम्पादकौ

हर्षितरायविवेकार्यौ

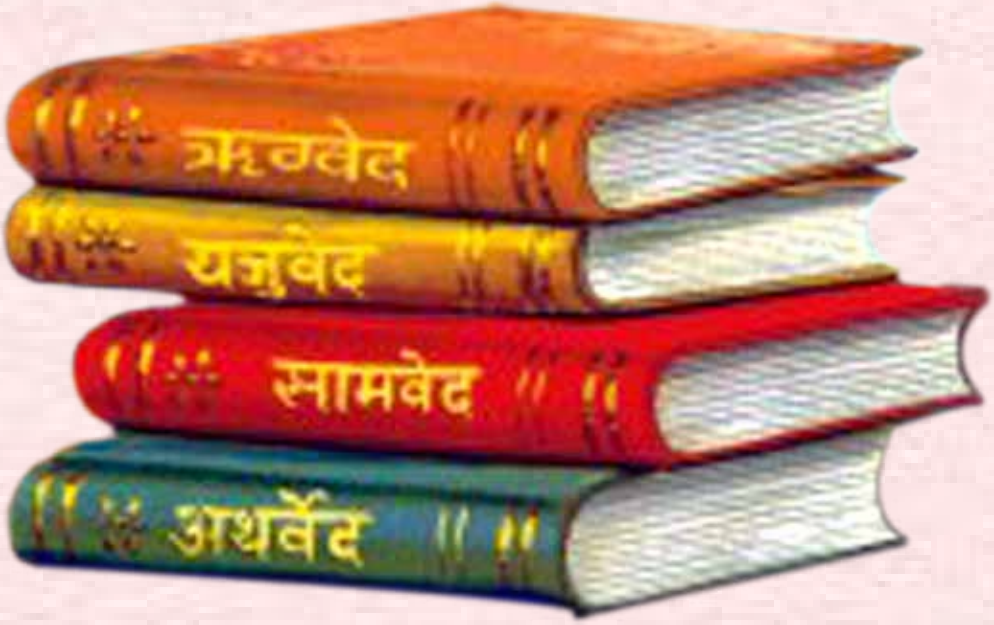

अनुक्रमणिका

1. गीतामृतम् - तरुणचाण्डकः---------- 51
2. स्त्री-शिक्षा - तान्या महाजनः ---------- 51
3. सत्यमेव जयते - आदित्यकुमारमिश्रः ---------- 52
4. योगेन कोरोनायाः संरक्षणम् - हर्षितरायः ---------- 53
5. मातृदेवो भव - प्रशान्तकुमारः ---------- 54
6. महाशिवरात्रिः - आदित्यसिंहः---------- 55
7. संस्कृतदिवसः - नेहा कुमारी ---------- 55
8. अभ्यासवैराग्ययोः सामान्यजीवने महत्त्वम् - अमनराजः ---------- 56
9. विश्वबन्धुत्वम् - दीपकः ---------- 56
10. ब्राह्मीलिपिः - विवेककुमारः ---------- 57
11. संस्कृताध्ययनेन आजीविकायाः अवसराः - सुभाषः झा ---------- 58
12. कृषकाः कर्मवीराः - खुशी ---------- 59
13. मौनम् - नवीनः ---------- 59
14. प्रकृतिः - शिवांसी मिश्रा ---------- 59

गीतामृतम्

तरुणचाण्डकः
बी.ए. संस्कृतं (विशेषः), तृतीय वर्षः

सर्वोपनिषदो गावो दोग्धा गोपालनन्दनः।
पार्थो वत्सः सुधीर्भोक्ता दुग्धं गीतामृतं महत्।।

श्रीमद्भगवद्गीता समस्तसंसारे विख्याता। संसारस्य अधिकांशभाषासु अस्या अनुवादाः सम्पन्नाः। सप्तशतश्लोकात्मके अस्मिन् लघुग्रन्थे सकलमानवतायै शान्तिसन्देशाः प्रदत्ताः। वस्तुतः गीतायां कृष्णार्जुनसंवादमाध्यमेन वेदानाम् उपनिषदां च ज्ञानस्य सारः संगृहीतः।

महाभारते यदा युद्धभूमौ अर्जुनः सम्मुखमेव रणाय समुद्यतानां धृतराष्ट्रपुत्राणां दुर्योधनादीनां सेनां पश्यति तदा तैः भ्रातृभिः अन्यैः सम्बन्धिभिश्च सह असौ योद्धुं नेच्छति। तस्य मनसि मोहः जायते। तदा तस्य रथस्य सारथिरूपेण स्थितः महान् नीतिज्ञः योगेश्वरः श्रीकृष्णः तम् उद्बोधयति युद्धाय च प्रेरयति। सः कथयति यत् मनुष्येण फलस्य चिन्तां न कृत्वा कार्यं कर्तव्यम्। सर्वे जनाः एकस्मिन् दिवसे निश्चितम् आयुः यापयित्वा अवश्यमेव मरिष्यन्ति। परन्तु तदा केवलं तेषां शरीरं नश्यति, आत्मा तु अजरः, अमरः अस्ति, स न नश्यति। अतः एतेषां बन्धूनां नाशविषये भयं न कर्तव्यम्। यैः शरीरैरेते उत्पीडयन्ति कपटाचरणं च कुर्वन्ति तेषां नाशः आवश्यकः अस्ति। अतः अस्मिन् युद्धे युद्धं कर्तव्यमेव। अनेन भगवतः कृष्णस्योपदेशेन अर्जुनः ज्ञानं प्राप्य मोहं त्यक्त्वा युद्धाय कृतनिश्चयः अभवत्। श्रीमद्भगवद्गीता निष्कामकर्मणः उपदेशं ददाति, निर्भीकतां च शिक्षयति। आत्मनः अजरत्वम् अमरतत्वं, व्याप्तं, सर्वभूतान्तर्यामित्वं च उपदिश्य मनुष्यं त्यागमार्गं दर्शयति। गीतायां संन्यासस्य, कर्मणः, ज्ञानस्य भक्तेश्चापूर्वः समन्वयः लक्ष्यते। अयं समन्वयः एव भारतीयसंस्कृतेः दर्शनस्य विचारधारायाश्च प्रतीकं वक्तुं शक्यते। गीतायाः सन्देशः विश्वबन्धुत्वस्य, विश्वशान्तेः सन्देशः, आदर्शमानवस्य च सन्देशः। गीतायाः ज्ञानेन किंकर्तव्यविमूढो जनो मार्गं लभते मानसिकशान्तिः चाधिगच्छति। अत एव सर्वशास्त्राणां सारभूता गीता अमूल्यम् अप्रतिमग्रन्थरत्नं कथ्यते। गीतायाः सारः अस्मिन् श्लोके वर्तते-

कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन।
मा कर्मफलहेतुर्भूर्मा ते सङ्गोऽस्त्वकर्मणि।।

स्त्री-शिक्षा

तान्या महाजनः
बी.ए. संस्कृतं (विशेषः), तृतीयवर्षः

काले काले राष्ट्रस्य अभ्युदयाय स्त्रीणां भूमिका महती वर्तते। तत्रापि शिक्षा परमावश्यकी भवति। शिक्षया जनेषु आत्मविश्वासः समुत्पन्नः भवति। आत्मविश्वासेन साफल्यं लभ्यते। समाजे स्त्रियः क्षमतायाः प्रतिभायाः च प्रतिमूर्तिरूपाः किन्तु व्यावहारिकजीवने स्त्रीणाम् अधिकाराः पुरुषवर्गस्य समं न सन्ति। सामान्यतः पुरुषः धर्नाजनं कृत्वा परिवारस्य संरक्षणं करोति। शिक्षिताः स्त्रियः धनम् अर्जयित्वा आयव्ययस्य व्यवस्थाम् अपि कुर्वन्ति। परिवारस्य समस्तभारः स्त्रीणामुपरि भवति। पुरुषः केवलं धनार्जनं कृत्वा तदीयोत्तरदायित्वं निर्वहति। किन्तु स्त्री-पत्नी, माता, वधूः, भगिनी, पुत्री इत्यादिभिः रूपैः समाजे आत्मानं प्रतिष्ठापयति। अतः स्त्रीणां शिक्षाविषये अवश्यं सर्वैः अवधानं दातव्यम्, यतोहि शिक्षिताः स्त्रियः परिवारस्य अभ्युत्थानाय एव समर्थाः भवन्ति।

सत्यमेव जयते

आदित्यकुमारमिश्रः
बी.ए., संस्कृतं (विशेषः),द्वितीयवर्षः

सत्यमेव सर्वश्रेष्ठधर्मः अस्ति। सत्यात् परं कोऽपि धर्मः नास्ति। मालाजपनं, श्रीरामनामरटनं, भाले तिलकलेपनं, गंगास्नानम् धर्मस्य बाह्याडम्बरः अस्ति। सर्वेभ्यः श्रेष्ठधर्मः अस्ति सत्यस्य अङ्गीकरणं, सत्यपथे गमनं, स्वजीवने सत्यस्य आचरणम्।

सत्यमेव सर्वेषां गुणानां मूलाधारः अस्ति। ये जनाः सर्वदा सत्यम् वदन्ति, तेषु सर्वे गुणाः आगच्छन्ति। सत्यभाषिणः सर्वत्र प्रशंसिताः, समादृताश्च भवन्ति। असत्यवादिनः निन्दिताः निरादृताश्च भवन्ति। स्वजीवने अग्रे गमनाय सत्यस्य आचरणम् आवश्यकम् अस्ति।

सत्यवादिनः जनाः सत्यस्य रक्षणाय स्वपरिवारं, पुत्रं, भार्यां, स्वराज्यमपि त्यजन्ति, इतोऽपि अधिकम् स्वकीयप्राणोत्सर्गं कुर्वन्ति। परन्तु सत्यपथात् न प्रविचलन्ति। राजा हरिश्चंद्रः सत्यस्य रक्षणाय स्वपरिवारं स्वराज्यं त्यक्त्वा यथा कष्टं अनुबभूव तथा अपरः कश्चन जनः न दृश्यते, अन्ततः सः एव विजयी अभवत्।

महात्मा गांधी महोदयः अपि तादृशः एव च सत्यवादी आसीत्। अयं महानुभावः अपि सत्यस्यैव लक्षणम् अकरोत्। वैदेशिकानां विपक्षीदलानां कट्वालोचनां कृते सति सत्यस्य मार्गं न अत्यजत्। अन्ततः सत्यमेव विजयी अभवत्।

सत्यस्य सर्वोपरि महत्त्वम् अस्ति। प्राचीनकाले ऋषयः स्वानुभवस्य बलेन एव अकथयन् "सत्यमेव जयते"। साम्प्रतं भौतिकयुगे असत्यस्य एव विजयः भवति तथापि विजेतृ-जनानां मनसि प्रसन्नता न दृश्यते। सत्यं भौतिकतया पराजितं भूत्वा अपि स्वप्रकाशस्य त्यागं न करोति।

अस्मात् कारणात् असत्यवादिनः जनाः अपि स्वपुत्रैः भार्यया मित्रैः चापि सत्यस्य एव अपेक्षां कुर्वन्ति। सत्यस्य महत्त्वं प्रतिपादयन् अयम् श्लोकः सदैव स्मरणीयः अस्ति यत्

सत्येन धार्यते पृथ्वी सत्येन तपते रविः।
सत्येन वाति वायुश्च सर्वं सत्ये प्रतिष्ठितम्।।

स्वभावं नैव मुञ्चन्ति सन्तः संसर्गतोऽसताम्।
न त्यजन्ति रुतं मञ्जु काकसम्पर्कतः पिकाः।।
– दृष्टान्तशतकम्

मा भ्राता भ्रातरं द्विक्षन् मा स्वसारमुत स्वसा।
सम्यञ्चः सव्रता भूत्वा वाचं वदत भद्रया।।
– अथर्ववेदः-3/30/3

योगेन कोरोनाया: संरक्षणम्

हर्षितराय:
बी. ए. संस्कृतं (विशेष:), तृतीयवर्ष:

द्विसहस्र एकोनविंशतितमे वर्षे दिसम्बरमासात् आगतेन कोरोनानामकमहारोगेण संक्रमणेन वा प्रत्यक्षाप्रत्यक्षरुपेण शारीरिकं स्वास्थ्यं मनःस्थितिञ्च अतीव प्रभावितकृतमस्ति, वैज्ञानिका: नैकै: माध्यमै: अस्य रोगस्य निवारणाय प्रयासरता: आसन् येषु माध्यमेषु योगोऽपि सम्मिलितोऽस्ति, "दुःखसंयोगवियोगं योगसंज्ञितम्" इत्युक्ते नानाविधदुःखेभ्य: मुक्ते: नाम योग: तथा च "योगश्चित्तवृत्तिनिरोध:" अर्थात् चित्तवृत्तीनां निरोध एव योग:। योग: मनसश्चञ्चलतां प्रशम्य आत्मबलं मनोबलञ्च वर्धते सकलं विश्वमध्ये योगमाहात्म्येनायुर्वेदमाहात्म्येन च कोरोनानिदाने संलग्नोऽस्ति।

योग: एका वैज्ञानिकी अथवा सार्वभौमिकपद्धति: इति वेदै: आधुनिकवैज्ञानिकैश्च स्वीक्रियत एव योगेन कोरोनारोगस्योपचारः द्विधा कर्तुं शक्यते १. शारीरिकोपचारः २. मानसिकोपचारः।

शारीरिकोपचारः, अस्मिन् उपचारे हठयोगेन अष्टाङ्गयोगेन वा कोरोना रोगस्य निवारणाय प्रयतेत। अथर्ववेदे उच्यते यत् "आवात वाही भेषजं विवाद वाही यद्रप:" अर्थात् प्राणशक्तिं विवर्ध्य रोगाणाम्, शुद्धप्राणवायुना उत्तमरक्तसंचार: च उत्तमप्राणवायुरनुरक्षिताय प्राणायम: आसनानि च अत्यावश्यकानि।

प्राणायाम: - अनुलोमविलोम: वर्तमानशोधानुसारेण अथर्ववेदानुसारेण "द्वाविमौ वातौ वात आ सिंधोरा परावत:।" श्वासप्रश्वासयोर्यद् कार्यं नासिकया क्रियते सैव अनुलोमविलोम:, शरीरस्य नानावायुकोषविकारान् श्वासमाध्येन बहि: करणमेवास्य कार्यम्, वेदानुसारेण प्राणवायु: बलवन्तं भूत्वा एव व्यक्ते: शरीरे रक्तसंचारं जायते, येन मनुष्यस्य प्राणवायुस्तरं अधो न याति।

कपालभाति: - अनेन श्वासनतंत्रं फुस्फुसञ्च सुदृढे भवत:।

भस्त्रिका - अनेन श्वसनतंत्रस्य, हृदयस्य, मस्तिष्कस्य च तन्त्रिण: सुस्था: भवन्ति।

आसनम् - पतञ्जलिनोक्तमासनविषये "स्थिरसुखमासनम्" शोधानुसारेण (पतंजलि विश्वविद्यालय) कानिचनासनानि कोरोनात: संरक्षणाय तथा च स्वास्थ्यलाभे सक्षमाणि मन्यन्ते। उदाहरणम्- उष्ट्रासनम्, पश्चिमोत्तानासनम्, पवनमुक्तासनम्, मण्डूकासनम्।

अथर्ववेदे (४ काण्डे/१० सूक्ते/ २,३,८ मंत्रे) संखतक्रियाया: सूर्यक्रियायाश्च उल्लेखः अस्ति। संखतक्रिया फुस्फुसानि सुदृढानि करोति, तथा च सूर्यचिकित्सा विषाणुसंक्रमितेभ्य: विटामिन डीरूपेण अत्यावश्यकी वर्तते। लोमा- लिण्डा यूनिवर्सिटी, कैलिफोर्निया- फिजिकल मेडिसिन एंड रिहैबिलिटेशन जर्नल इति स्थानके प्रकाशिते तेषां अध्ययनानुसारेण योग: कोरोनोपचारेण सहायक: वर्तते। मैसाचुसेट्सविश्वविद्यालयस्य शोधकर्तृभिः सार्स सी. ओ. वी.-२ संक्रमणस्य उपचारे योग: प्रभावी मन्यते। एम्स (दिल्ली) उक्तवान्- योगेन मेलिटोनिन इत्यस्य वृद्धि: भवति एवञ्च नित्ययोगकरणेन व्यक्ते: आयुर्वृद्धिर्भवति।

मानसिक उपचार: - सकलमानवजातिरस्य साक्षी अस्ति यत् कोविडरोगेण यावत् शरीरं प्रभावितं ततोऽप्यधिकं मस्तिष्कं मनश्च। "मन एव मनुष्याणां कारणं बन्धमोक्षयो:" व्यक्ते: मन: सात्विकं दृढसंकल्पितमं च भवति चेत् ननु विजयं प्राप्स्यति, आनन्दावस्थायां व्यक्तिः नीरोगी भवति, यतोहि तस्य मनोबलम् आत्मबलञ्च उच्चस्तरे भवति। अथर्ववेदे स्वयं अंगिरा-ऋषिणा (२ काण्डे, १० सूक्ते, १-८ मन्त्रे) रोगिण: आसनमाध्यमेन मनोबलम् आत्मबलञ्च वर्धयित्वा प्रतीकारनिर्माणस्य (एंटीबॉडी) उल्लेख: कृतोऽस्ति तथा च उन्मोचन-ऋषिणा संकल्पशक्तिमाध्यमेन आत्मबलम्, मनोबलम्, प्राणबलं च वर्धयित्वा रोगनाशस्य पक्ष: निगदितोऽस्ति। पतञ्जलिविश्वविद्यालयद्वारा (हरिद्वारं) शोधोपरान्तम् उक्तानि प्राणायमासनानि, यै: मन: शान्तं आत्मविश्वास: तथा च प्रबलेच्छाशक्ति: जायते। आसनम् – ताडासनं, हनुमतासनम्, उत्कटासनम् इत्यादि। आयुषमंत्रालयस्य (भारतसर्वकारस्य) शोधानुसारम् योग: तनावं

'हार्मोन' इति न्यूनीकृत्य लसिकातंत्रम् उत्तेजितं कुर्वन् विषाक्तपदार्थान् शरीरात् बहिर्निष्कासयति।

एन. सी. बी. आर इति अनुसारेण प्राणायामः प्रतिरक्षातंत्रेण साकम् (इम्यूनसिस्टम) मनःस्थितिमपि सुदृढीकरोति। संक्रमणरोगः कोरोना इत्यस्य च प्रभावम् निष्करणार्थम् योगः एव उत्तमः विकल्पः भवितुमर्हति, यतोहि नित्ययोगक्रियया आत्मबलम् मनोबलं तु वर्धत एव सार्धमेव पतितप्रकोष्ठानाम् (डीजनरेट सेल्स) पुनर्जन्मोऽपि भवति, श्वेतरक्तकणिकाः वर्धन्ते, तथा सकलप्रणाली (साल्ट्स, हार्मोन्स) शारीरिकसंतुलने भवंति – समत्वम् योग उच्यते।

यद्यपि कोरोना रोगात् संरक्षणाय वैक्सीनं औषधयश्च उपस्थिताः सन्ति तथापि स्वस्थजीवनं प्राप्त्यर्थम् योगस्य आयुर्वेदस्य चाश्रयः प्राकृतिकम् स्वाभाविकञ्च।

मातृदेवो भव

प्रशांतकुमारः
बी.ए., संस्कृतं (विशेषः), तृतीयवर्षः

नास्ति मातृसमाच्छाया, नास्ति मातृसमा गतिः।
नास्ति मातृसमं त्राणम्, नास्ति मातृसमा प्रिया।

अस्मिन् संसारे माता एव परं दैवतमस्ति। मातुः स्थानग्रहणे तु कोऽपि न समर्थः। सर्वोत्कृष्टं स्थानं मातुरेव। सा तु स्वर्गादपि गरीयसी वर्तते। मातुरधिकं किमपि पूज्यं नास्ति। वेदेषु पुराणग्रन्थेषु चापि मातुः महात्म्यं वर्णितम्। पितुः आचार्यात् चापि माता श्रेष्ठा अस्ति। अतः सर्वप्रथमः अयमुपदेशः 'मातृदेवो भव' इति। पितृदेवो भव, आचार्य देवो भव इत्यादिकाः उपदेशाः पश्चादागच्छन्ति।

सन्ततिपालने माता किं किं न करोति। सा अनेकानि कष्टानि सहते। शैशवे पुत्रस्य कारणेन रात्रौ अपि जागरणं करोति। स्वयं दुःखं सहते, किन्तु पुत्राय सर्वं सुखं यच्छति। माता अतीव पुत्रवत्सला भवति। सा एव बालकस्य प्रथमा गुरुः अपि भवति। विद्यालयगमनात् प्रागेव सा बालकं स्नेहेन शिक्षयति। महाभारते महर्षिणा व्यासेनापि उक्तं, 'नास्ति मातृसमो गुरुः'। स्नेहपरायणा, साधुस्वभावा माता बहुना अपि मूल्येन लब्धुं न शक्यते। 'दीवार' नाम हिन्दी चित्रपटे अपि मातुः महत्त्वं दर्शितम्। तत्र अयं संवादः लोकप्रियः अभवत्, मम समीपे धनमस्ति, वाहनमस्ति, गृहमस्ति, तव समीपे किमस्ति? तदा नायकः वदति, 'मम समीपे माता अस्ति'।

एवं मातुः महत्त्वं सर्वैः स्वीकृतम्। सुप्रसिद्धमातृभक्तं श्रवणकुमारं को न जानाति। आधुनिके काले अपि अनेके मातृभक्ताः सन्ति। मातुः माहात्म्यं सर्वाधिकं वर्तते। सा परमकल्याणी अस्ति।

मातृदेवो भव।

आलस्यं हि मनुष्याणां शरीरस्थो महारिपुः।
नास्त्युद्यमसमो बन्धुः कुर्वाणो नावसीदति।।
– भर्तृहरिः

महाशिवरात्रिः

आदित्यसिंहः
बी.ए. संस्कृतं (विशेषः), तृतीयवर्षः

माघमासस्य कृष्णपक्षस्य चतुर्दश्यां तिथौ आचर्यते महाशिवरात्रिपर्व। प्रयागपुष्करः यथा तीर्थराज इति उच्यते तथैव महाशिवरात्रिः व्रतराज इति उच्यते। एतत् पर्व यद्यपि शैवाणां परम्पवित्रं तथापि अन्यैः अपि आचरणीयम् अन्यथा तेषां पूजाफलं नश्यति इति वदन्ति शास्त्राणि। शिवरात्र्यां यः उपवासं जागरणं च ज्ञात्वा अज्ञाय आचरति सः स्वर्गं गच्छति इति वदन्ति शास्त्राणि। सामान्यतया देवतापूजार्थं दिवासमयः इव प्रशस्तः किन्तु शिवरात्रिपर्वणि तस्य नामानुगुणं रात्रिरेव प्रशस्तकालः पूजार्थम्। सम्पूर्णम् उपवासं कृत्वा रात्रौ जागरणम् आचरणीयम्। रात्रौ एव पूजा करणीया इति। कलियुगे चतुर्दश्यां रात्रौ केवलं भूमौ सञ्चरन् समस्तस्थावरजङ्गमेषु संक्रमिष्ये। समग्रे वर्षे कृतं पापं परिहरति।

"मंदाकिनीसलिलचन्दनचर्चिताय नन्दीश्वरप्रमथनाथ महेश्वराय।
मन्दारपुष्पबहुपुष्पसुपूजिताय तस्मै मकाराय नमः शिवाय।।"

शिवरात्र्याचरणं स्यात् शिवस्य प्रियं यथा शिवस्य ध्यानानन्दः आत्मगुणसम्पत्तिः अत्यन्तं प्रियौ स्तः। सर्वभूतेषु दया, निरसूया, शुचित्वम्, अनायासः, क्षमागुणः, अकार्पण्यभावः, मङ्गलं, दुराशां विना जीवनम् इत्येतानि एव अष्ट आत्मगुणाः!

संस्कृत-दिवसः

नेहा कुमारी
बी.ए., संस्कृतं (विशेषः), द्वितीयवर्षः

संस्कृतदिवसः श्रावणमासस्य पूर्णिमायां भवति। श्रावणपूर्णिमा ऋषिणां स्मरणस्य पूजनस्य समर्पणस्य च पर्व अस्ति। ऋषिरेव संस्कृतस्य आदिः श्रोतः अस्ति अतः श्रावणपूर्णिमा ऋषिपर्व कथ्यते। नवदश एकोनसप्ततिः तमे वर्षे भारतसर्वकारस्य शिक्षा मंत्रालयस्य आदेशेन केन्द्रीय- राज्यसर्वकारैः संस्कृतसप्ताहं घोषितम्। ततः प्रभृतिः दिवसः अयं संस्कृतदिवसरूपेण मन्यते। प्राचीनकाले अस्मिन् दिने शिक्षासत्रस्य प्रारम्भं भूत्वा पौषमासपर्यन्तम् समाप्तम् भवति स्म। संस्कृतभाषा वैज्ञानिकी अस्ति। सङ्गणस्य कृते सर्वोत्तमभाषा विद्यते। अस्याः वाङ्मयं वेदैः पुराणैः नीतिशास्त्रादिभिः च समृद्धम् अस्ति। विश्वकवेः कालिदासस्य काव्यसौन्दर्यम् अनुपमम्। चाणक्यरचितम् अर्थशास्त्रं जगत्प्रसिद्धम् अस्ति। गणितशास्त्रे शून्यस्य प्रतिपादनम् सर्वप्रथमः भास्कराचार्यः सिद्धान्तशिरोमणिः अकरोत्। रसायनशास्त्रम्, ज्योतिष्शास्त्रम्, विमानशास्त्रम् उल्लेखनीयम्।

संस्कृतम् अल्पशब्देषु वाक्यं पूर्णं करोति। उच्चारणदृष्ट्या संस्कृतभाषायां या लिख्यते सैव पठ्यते। अतः भारतस्य ज्ञानम् नाम संस्कृतम्। भारतस्य विचारो नाम संस्कृतम्। भारतस्य चिन्तनम् नाम संस्कृतम्। अतः संस्कृतदिने गीतानि, नाटकानि अनेके कार्यक्रमाः करणीयाः। हैलो-हाय इत्यादिकं त्यजतु हरि ॐ इति वदतु घोषणा करणीया। संस्कृतं कठिनं नास्ति, संस्कृतं सरलं अस्ति। सर्वे वदन्तु संस्कृतम्।

जयतु भारतम्, जयतु संस्कृतम् !

अभ्यासवैराग्ययोः सामान्यजीवने महत्वम्

अमनराजः
बी.ए., संस्कृतं (विशेषः), तृतीयवर्षः

अस्मिन् समये विश्वे अति निराशा अस्ति। जनाः युवावस्थायां जीवनात् पराजयं मन्यन्ते। इयम् असौ अवस्था भवति यदा मनुष्यः सर्वाधिकं उर्जावान् उत्साहवाँश्च भवति, किन्तु अनेककारणैः इदानीं युवाः लक्ष्यं प्राप्तुम् समर्था न भवन्ति, अतः निराशामनुभवन्ति। एतत् कोऽपि द्रष्टुम् शक्नोति। अस्मिन् विपरीतसमये प्रेरणायाः प्रचलनं अवर्धयत, किन्तु प्रेरकाः केवलं प्रेरयन्ति वा जीवने परिवर्तनाय उपायं कथयन्ति। जीवने वास्तविकं परिवर्तनाय आचारेषु व्यवहारेषु च परिवर्तनं कुर्यात् यतोहि आचारव्यवहारयोः परिवर्तनं विना वास्तविकं परिवर्तनं न भवति।

अतः योगदर्शने वर्णितयोः अभ्यासवैराग्योः महत्वं वर्धते। अभ्यासवैराग्यौ अध्यात्मसंबंधितं भवतः सामान्यतः इति मन्यते, किन्तु अनयोः महत्वं समान्यजीवने अपि स्तः।

योगदर्शने एतौ चित्तवृत्तिः निरोधस्य उपायं स्तः। चित्तवृत्तिः निरोधेन साधको योगं प्राप्नोति। समान्यजीवने अभ्यासवैराग्यौ प्रासंगिकमस्ति यतोहि एतौ जीवने परिवर्तनं कर्त्तुं शक्नुतः, लक्ष्यप्राप्तौ सहायतां कर्त्तुं शक्नुतः। जीवने परिवर्तनमेव जीवनं सुखपूर्णं कर्त्तुं शक्नोति। यथा छात्राय मुख्यं कार्यं अध्ययनमस्ति किन्तु अनावश्यककार्येषु प्रवृत्तिवशात् ते लिप्ताः भवन्ति। ते समर्पणभावेन अध्ययनकार्यं न कुर्वन्ति। अभ्यासवैराग्याभ्यां ते अध्ययनकार्ये स्वयमेव प्रवृत्ता भवन्ति। छात्राः अनुचितकार्येषु आसक्ताः भवन्ति, अतः तैः आसक्तिनिवृत्तये तस्मिन् दोषं दृष्ट्वा वैराग्यानुष्ठानं करणीयं तथा एककाले अध्ययने प्रवर्त्तये अध्ययनाभ्यासो अपि करणीयः यतोहि मनः चंचलः भवति, एतौ द्वौ युगपदेव करणीयम्।

एवं वैराग्येन छात्रस्य अनुचितकार्येषु निवृत्तिः भवति तथा अभ्यासेन तस्य अध्ययने प्रवृत्तिः जायते। अन्येषु लौकिककार्येषु अपि अभ्यासवैराग्योः महत्वम् एवमेव, यतोहि इमे विना लक्ष्यपूर्णतायां यत् समर्पणमावश्यकमस्ति तन्न आगच्छति।

विश्वबन्धुत्वम्

दीपकः
बी.ए., संस्कृतं (विशेषः), तृतीयवर्षः

उत्सवे, व्यसने, दुर्भिक्षे, राष्ट्रविप्लवे, दैनन्दिनव्यवहारे च यः सहायतां करोति सः बन्धुः भवति। यदि विश्वे सर्वत्र एतादृशः भावः भवेत् तदा विश्वबन्धुत्वं सम्भवति। परन्तु अधुना निखिले संसारे कलहस्य अशान्तेः च वातावरणम् अस्ति। मानवा परस्परं न विश्वसन्ति। ते परस्य कष्टं स्वकीयं कष्टं न गणयन्ति। अपि च समर्थाः देशाः असमर्थान् देशान् प्रति उपेक्षाभावं प्रदर्शयन्ति तेषाम् उपरि स्वकीयं प्रभुत्वं स्थापयन्ति। संसारे सर्वत्र विद्वेषस्य, शत्रुतायाः, हिंसायाः च भावना दृश्यते। देशानां विकासः अपि अवरुद्धम् भवति।

इयम् महती आवश्यकता वर्तते यत् एकः देशः अपरेण देशेन सह निर्मलेन हृदयेन बन्धुताया व्यवहारं कुर्यात्। विश्वस्य जनेषु इयं भावना आवश्यकी। ततो विकसिताविकसितयोः देशयोः मध्ये स्वस्था स्पर्धा भविष्यति। सर्वे देशाः ज्ञानविज्ञानयोः क्षेत्रे मैत्रीभावनया सहयोगेन च समृद्धिं प्राप्तुं समर्थाः भविष्यन्ति। सूर्यस्य चन्द्रस्य च प्रकाशः सर्वत्र समानरूपेण प्रसरत। प्रकृतिः अपि सर्वेषु समत्वेन व्यवहरति। तस्मात् अस्माभिः सर्वैः परस्परं वैरभावम् अपहाय विश्वबन्धुत्वं स्थापनीयम्। अतः विश्वस्य कल्याणाय एतादृशी भावना भवेत्

अयं निजः परो वेति गणना लघुचेतसाम्। उदारचरितानां तु वसुधैव कुटुम्बकम् ॥

ब्राह्मीलिपिः

विवेककुमारः
बी.ए., संस्कृतं (विशेषः), तृतीयवर्षः

ब्राह्मीलिपिः विश्वस्य एका प्रचीना लिपिः अस्ति। सम्राट् अशोकः एतां लिपिं प्राकृतभाषायां प्रयुक्तवान्। प्रायः षष्ठ - पञ्चशताब्दाभ्यां पूर्वम् उपयुज्यमाना लिपिरियम्। इदानीमुपलब्धासु लिपिसु इयम् प्राचीनतमा विद्यते। प्राचीनावशेषु अशोककालीनशिलालेखानि ब्राह्मीलिप्यामेव प्राप्तानि। इयं लिपिः ब्रह्मणा सृष्टा इति। उक्तञ्च–

नाकरिष्यद्यदि ब्रह्मा लिखितं चक्षुरुत्तमम्।
तत्रेयमस्य लोकस्य नाभविष्यच्छुभा गतिः।। नारदस्मृति ४/७०

रेखात्मिका लिपिः एषा अन्तरकालीनमपि उत्पादिका आसीत्। प्रायः लेखनसामग्रीणां, लेखकानां च विभिन्नतायाः हेतोः ब्राह्मीलिपितः अनेका लिपयः सम्भूताः। यदा विभिन्नाः लिपयः समभूवन् तदा क्रमेण ब्राह्मीलिपिः विस्मृता। चतुर्दशशताब्दे फिरोजशाहतुगलकः अशोककालीनं विशिष्टं शासनस्तम्भद्वयं देहलीनगरं आनीतवान्। पण्डिता अन्ये विद्वांसश्च स्तम्भद्वयं पठितुम् यत्नं कृतवान्। किन्तु कोऽपि ब्राह्मीलिपिं पठितुं न समर्थः। तदनन्तरं षोडशशताब्दे तत् शासनस्तम्भद्वयं पठितुम् अकबरोऽपि प्रयत्नं कारितवान्। परन्तु सोऽपि निष्फलः जातः। अनन्तरं सप्तदशशतचतुरासीतितमे वर्षे विलियमजोन्समहोदयः भारतीयसंस्कृतेः अध्ययनार्थं 'रॉयल एशियाटिक सोसायटी' इति संस्थां स्थाप्य भारतीयलिपीनां, मुद्रानां, विविधभारतीयग्रन्थानां च अध्ययनम् आरब्धवान्। तत्कारणात् एव अनेके विद्वांसः भारतीयेतिहासाध्ययने आसक्ताः अभवन्। जेम्सप्रिन्सेपमहोदयः सर्वप्रथमं अष्टादशशताधिकषष्ठत्रिंशत् तमे वर्षे बहुशोधनं कृत्वा ब्राह्मीलिपेः सर्वान् वर्णान् अपठत्।

अक्षराणि सूक्ष्मतया अवलोक्य इदानीम् भारतीयलिपीनां मूलस्रोतः ब्राह्मीलिपिः अस्ति इत्येवं विद्वांसः निश्चितवन्तः। दक्षिणभारते विद्यमानाः लिपयः कन्नड-तेलगु-मलयालम् इत्यादिलिपयः गुप्तकालीनब्राह्मीलिप्या सह सम्बन्धं वहन्ति। उत्तरभारते उपलब्धाः शारदालिपिः, भोटिलिपिः, नेवारी-मैथिली-देवनागरी-इत्यादिलिपयः शुङ्गकालीनब्राह्मलिप्या कुशानकालीनब्राह्मलिप्या सह सम्बन्धं वहन्ति। एतासु लिपिसु काश्चन इदानिमपि उपयुज्यन्ते, काश्चन लिपयः इदानीं न उपयुज्यन्ते। परन्तु सर्वाः लिपयः पूर्वम् उपयुज्यन्ते स्म इति पाण्डुपत्राणां अवलोकनेन ज्ञायते।

भाषासु मुख्या मधुरा दिव्या गीर्वाणभारती।
तस्माद् हि काव्यं मधुरं तस्मादपि सुभाषितम्।।
– सुभाषितरत्नभाण्डागारम्

सुलभाः पुरुषा राजन् सततं प्रियवादिनः।
अप्रियस्य च पथ्यस्य वक्ता श्रोता च दुर्लभः।
– रामायणम्

संस्कृताध्ययनेन आजीविकायाः अवसराः

सुभाषो झा
बी.ए., संस्कृतं (विशेषः), द्वितीयवर्ष :

केचिद् जनाः कथयन्ति संस्कृते आजीविकायाः अवसरो नास्ति। अत एव संस्कृतपठनेन को लाभः? परन्तु इयं धारणा सर्वथा भ्रान्ता। अत्रेदं सत्यं नास्ति। वस्तुतस्तु संस्कृते आजीविकायाः अधिकोऽवसरः। तेषु केचित् अत्र प्रस्तूयन्ते:

1. प्रशासनिक-सेवार्थं आयोजितेषु संघलोकसेवायोगपरीक्षासु संस्कृतच्छात्राः अधिकानङ्कान् प्राप्य साफल्यं प्राप्तुं ' संस्कृतम् एकः अंककरी विषयः' इति सर्वे जानन्ति। एतदतिरिक्तभारतसर्वकारस्य शिक्षाविभागे (मानव संसाधन विकास मंत्रालये) 'संस्कृत–प्रभागः' इति वर्तते यत्र चत्वारोऽधिकारिणः संस्कृतज्ञाः (AEO, EO, AEA, and DEA) भवन्ति।
2. भारतस्य सामान्यविश्वविद्यालयेषु तत्सम्बद्धमहाविद्यालयेषु च प्रायः संस्कृतविभागः वर्तते। एतद् अतिरिक्तं देशे द्वादश–संस्कृतविश्वविद्यालयाः त्रयश्च मानितसंस्कृतविश्वविद्यालयाः सन्ति यत्र संस्कृतस्यैव छात्राः प्राधान्येन नियुक्तिं प्राप्तुं शक्नुवन्ति। एतद् अतिरिक्त एकः संस्कृतविश्वविद्यालयः नेपालदेशे 'काठमाण्डू' इति स्थाने स्थितोस्ति। भारतसर्वकारेण दत्तानुदानेनापि पञ्चविंशतिः आदर्श-संस्कृत- महाविद्यालयाः। महर्षिसान्दीपनिवेदविद्याप्रतिष्ठानम् शोधसंस्था देशस्य विभिन्ने क्षेत्रेषु कार्यरताः यत्र संस्कृतस्य छात्रा एव नियोज्याः। देशस्य विविधेषु राज्येषु अपि संस्कृताकादमी स्थापिता यत्र संस्कृतच्छात्राणां कृते आजीविकायाः अवसरः विद्यते।
3. संस्कृतच्छात्राणां कृते विभिन्नेषु विद्यालयेषु शिक्षकपदे नियुक्तेः अवसरः अस्ति –
   क - राज्यसर्वकारस्य दिल्लीप्रशासनस्य विद्यालयेषु।
   ख - केन्द्रीयविद्यालयेषु।
   ग –सार्वजनिकविद्यालयेषु (पब्लिक/ प्राईवेट)।
4. भारतसर्वकारस्य संग्रहालयेषु पुरातत्वविभागे पाडुलिपिसंरक्षणकार्ये संस्कृतस्य छात्राणां कृते आजीविकावसरः विद्यते। भारतसर्वकारस्य संस्कृतिमंत्रालयस्य तत्वावधाने स्थापितस्य 'राष्ट्रियपांडुलिपिमिशन' इत्याख्यस्य विभिन्नशाखासु संस्कृतस्यैव मुख्यतया नियोज्यन्ते।
5. भारतीयसेनायाम् धर्मशिक्षकः इत्यस्मिन् पदेऽपि संस्कृतच्छात्राः एव नियुक्ताः भवन्ति।
6. राजकीय-आयुर्वेद-चिकित्सा-विभागे आयुर्वेद-चिकित्सा-सेवार्थमपि संस्कृतच्छात्राणां कृते अवसरः विद्यते।
7. स्वतंत्रजीविकोपार्जनं कर्मकाण्डं ज्योतिष्-योग-वास्तु-आयुर्वेदादिविषयेषु संस्कृतस्य छात्राः स्वतन्त्रतया जीविकोपार्जनं कर्तुं शक्नुवन्ति।

एवं संस्कृते आजीविकायाः प्रचुराः अवसराः सन्ति। भारतस्य प्राचीनज्ञानवैभवस्य संरक्षणे राष्ट्रस्यैकतायाः स्थापने संस्कृतस्य वैशिष्ट्यं विचार्य अस्माकं राष्ट्रपिता महात्मागांधिमहाभागेन उक्तम् – "भारतीयैः संस्कृतम् अवश्यम् पठनीयम्" तथा संस्कृतस्य महत्वम् प्रतिपादयितृभिः अस्माकम् राष्ट्रनिर्मातृभिः पण्डितजवाहरलालनेहरूमहोदयैः उक्तम् – "संस्कृतभाषा साहित्यञ्च भारतस्य निधिरस्ति। अस्मिन् यत्किञ्चिदस्ति तत्सर्वं धरोहरं गौरवपूर्णञ्चास्ति। यावत्संस्कृतमस्ति तावदस्माकं जनानां जीवनं भविष्यति, भारतस्य प्रबुद्धाः भविष्यन्ति।" अन्ते च किमाधिकं "जयतु संस्कृतम् जयतु भारतम्" इति।

कृषकाः कर्मवीराः

खुशी
बी.ए., संस्कृतं (विशेषः), द्वितीयवर्षः

सूर्यस्तपतु मेघाः वा वर्षन्तु विपुलं जलम्।
कृषिका कृषको नित्यं शीतकालेऽपि कर्मठौ।।

ग्रीष्मे शरीरं सस्वेदं शीते कम्पमयं सदा।
हलेन च कुदालेन तौ तु क्षेत्राणि कर्षतः।।

पादयोर्न पदत्राणे शरीरे वसनानि नो।
निर्धनं जीवनं कष्टं सुखं दूरे हि तिष्ठति।।

गृहं जीर्णं न वर्षासु वृष्टिं वारयितुं क्षमम्।
तथापि कर्मवीरत्वं कृषिकाणां न नश्यति।।

तयोः श्रमेण क्षेत्राणि सस्यपूर्णानि सर्वदा।
धरित्री सरसा जाता या शुष्का कण्टकावृता।।

शाकमन्नं फलं दुग्धं दत्त्वा सर्वेभ्य एव तौ।
क्षुधा -तृषाकुलौ नित्यं विचित्रौ जन-पालकौ।

मौनम्

नवीनः
बी.ए., संस्कृतं (विशेषः), तृतीयवर्षः

ज्वलन्तगृहं द्रष्टुमिच्छुकाः।
मा विस्मर ! त्वद्गृहमपि तृणानामिति।
अग्रे पृष्ठे वातितीव्रः वायुः।
अग्रे भवतामपि एतदेवायम् विधुः।
तस्य वधेऽहमपि मौनमासम्।
अधुना मम क्रमोऽपि आगतः।
मम हननसमये भवानपि मौनम् अस्ति।
अग्रिमः क्रमः भवतामेव।

प्रकृतिः

शिवांसी मिश्रा
बी.ए. संस्कृतं (विशेषः), द्वितीयवर्षः

फलम् प्रबोधम् पुष्पञ्च वर्षावसन्तकालश्च।
सूर्यचन्द्रयोः आभा च, प्रफुल्लरूपसृष्टयाः।।

प्रकृत्याः दास्यति प्राणम्, तस्याभा सूर्यचंद्रमसौ।
वायुजलं च तस्याषीः पुष्पं तस्योपहारञ्च।।

प्रभोषानिशामध्याह्नं शरदवसन्तश्च।
वनोपवनं पक्षी च, महिमन् इति सृष्टयाः।।

जलं विना न जीमूतोऽस्ति न च हरितोधरा।
मीनोगर्गोजलम् जीवनम् मानवस्य तृप्तिश्च।।

यथा चित्तं तथा वाचो यथा वाचस्तथा क्रियाः।
चित्ते वाचि क्रियायाञ्च साधूनामेकरूपता।।
– विक्रमचरितम्

सर्पः क्रूरः खलः क्रूरः सर्पात्क्रूरतरः खलः।
मन्त्रेण शाम्यते सर्पो न खलः शाम्यते कदा।।
– चाणक्यः

न कश्चित्कस्यचिन्मित्रं न कश्चित्कस्यचिद्रिपुः।
व्यवहारेण मित्राणि जायन्ते रिपवस्तथा।।
– हितोपदेशः

Sketches :
Shaikh Shamaa Parveen
B.Com (Hons.)

कृतिका
बी. ए. हिंदी (विशेष), प्रथम वर्ष

HANSRAJ COLLEGE

— UNIVERSITY OF DELHI —

TEL: 011-27667458, 27667747

Email: principal_hrc@yahoo.com,

Website: www.hansrajcollege.ac.in